सभी बातें सत्ता की

सामाजिक सत्ता
व इसके ढांचे
को समझना

श्रीलता बाटलीवाला

crea

क्रिया (CREA) द्वारा सामाजिक बदलाव के लिए नारीवादी नेतृत्व
के विषय पर जानकारी श्रंखला में पहली पुस्तक

जब ऐक्टिविस्ट लोगों के जीवन में बदलाव लाने की कोशिश करते हैं, या फिर उन पर हो रहे अन्याय को चुनौती देने का प्रयास करते हैं, तो वास्तव में वे **सत्ता के संतुलन** को बदलने की कोशिश कर रहे होते हैं।

विषय वस्तु

सभी बातें सत्ता की

प्रस्तावना 4

सत्ता क्या है? 12

सत्ता कहाँ मौजूद होती है? 22

सत्ता कहाँ से आती है? 32

सत्ता दिखती कैसी है? 42

सत्ता कैसे व्यक्त की जाती है? 52

सत्ता कैसे कार्य करती है? 68

सत्ता
को समझना

सामाजिक बदलाव के काम कर रहे हर ऐक्टिविस्ट के लिए **सत्ता** सम्बन्धों और इसके ढांचे **को समझना** बहुत ज़रूरी है।

महिला अधिकारों, जेंडर समानता के लिए काम कर रहे और उपेक्षित (जो अपनी अपनी जेंडर पहचान, यौन रुझानों, जाति, वर्ण, वंश, धर्म, राष्ट्रीयता, भौगोलिक स्थिति (गाँव या शहर), योग्यता/विकलांगता, व्यवसाय (सेक्स वर्कर्स आदि) या अन्य किसी भी कारण से सामाजिक रूप से अलग-थलग पड़े हों), और भेदभाव का शिकार लोगों को, उनके अधिकार दिलाने की कोशिश में लगे लोगों के लिए तो सत्ता को समझना और भी ज़रूरी व महत्वपूर्ण है।

लेकिन 'सत्ता' अपने आप में बहुत ही गहरे अर्थ वाली बड़ी धारणा और उलझा हुआ विचार है जिसे हममें से प्रत्येक व्यक्ति अपने खुद के नज़रिये से, अपने कार्य के मुद्दों, अपनी पढ़ाई और जानकारी, अपने खुद के अनुभवों के आधार पर अपने खुद के तरीके से समझने की कोशिश करता है।

इस प्राईमर को प्रकाशित करने का उद्देश्य, सत्ता और शक्ति के बारे में फैली इन्हीं भ्रांतियों को दूर करना और एक साझी समझ तैयार करना है, ताकि हम में से प्रत्येक व्यक्ति जो सामाजिक और जेंडर न्याय पाने और दिलवाने के प्रति समर्पित है, सत्ता की एक व्यापक और साझी परिभाषा के आधार पर अपना विश्लेषण कर सके, भले ही हमारे खास या सामाजिक-आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक संदर्भ कुछ भी क्यों न हों।

पहले एक एक्टिविस्ट और फिर बाद में एक छात्र के रूप में मैंने हमेशा पाया कि मेरा सामना अनेक ऐसी ही अवधारणाओं और सामाजिक पहलुओं से होता रहा जो बहुत पेचीदा, उलझी हुई और समझने में मुश्किल थीं – उदाहरण के लिए, सत्ता, लोकतन्त्र, अधिकार, समानता, भेदभाव, आदि। ये सभी बड़े विचार हैं जिनका अलग-अलग समय पर अलग-अलग लोगों नें अलग मतलब निकाला - आपको कहीं भी किसी पुस्तकालय या दुकान में ऐसी कोई किताब नहीं मिलेगी जो आपको बता दे कि, "यही है इस विचार [लोकतन्त्र, अधिकार, समानता, भेदभाव, स्शक्तिकरण] का सही मतलब, यह बिलकुल ऐसे ही दिखता है!" सच तो यह है कि इनमें से बहुत सी अवधारणाओं, बहुत विचारों को आसानी से तब समझा और पहचाना जा सकता है जब या तो ये मौजूद न हो या फिर इनका हनन हो रहा हो। हम सब जानते हैं कि असमानता क्या होती है, शक्ति-विहीन होना क्या होता है और अधिकारों का हनन होना क्या होता है। तो मैंने पाँच ऐसे प्रमुख प्रश्न तैयार किए जो हमें इन अवधारणाओं पर छाए भ्रम को हटाने और इन अस्पष्ट विचारों को अधिक स्पष्ट करने में मददगार होंगे। ये प्रश्न हैं:

१ यह क्या है?

सत्ता को हम कैसे परिभाषित करते हैं? समाज और मानव सम्बन्धों के संदर्भ में सामाजिक सत्ता का क्या अर्थ है? इस प्रश्न के उत्तर से हम अवधारणा, विचार या पहलू, जिसको हम समझना और जानना चाहते हैं, उसे बेहतर तरीके से समझने में मदद मिलेगी।

२ यह कहाँ है?

समाज में कहाँ सत्ता मौजूद है और किस स्थिति/स्थान में इसका होना हमारे लिए एक सोचने का विषय है? सत्ता कहाँ स्थित है, से यहाँ हमारा अर्थ केवल किसी देश/ नगर/ गाँव या किसी भौगोलिक या राजनीतिक सीमा से नहीं है। यह परिवार या समुदाय जैसी किस सामाजिक स्थिति में चल रही है, या फिर इसके तहत हम किस क्षेत्र या जनसंख्या समूह (कामकाजी लोग, ग्रामीण महिलाएं या फिर स्वास्थ्य, शिक्षा अथवा कृषि के क्षेत्र पर) पर विचार करना चाह रहे है। इस प्रश्न से हमें इस विचार या सिद्धान्त के लिए कुछ स्थानिक, जनसांख्यिकीय या सामाजिक सीमाएं निर्धारित करने में भी मदद मिलती है जिनके अंतर्गत हम इसे समझना चाहते हैं।

३ यह किस तरह प्रकट होती है या दिखाई पड़ती है?

सत्ता के कौन से अलग-अलग रूप और प्रकार हैं? सामाजिक सत्ता किन रूपों में प्रकट होती है? इस प्रश्न के उत्तर से हमें इस विचार के किसी संदर्भ या स्थान विशेष में, जहां इसे हम समझना चाह रहे हैं, दिखाई देने पर इसकी प्रमुख विशेषताओं को जानने में सहायता मिलेगी।

४ इसके होने के कारण और स्रोत क्या हैं?

सत्ता का आरंभ कैसे होता है या इसकी शुरुआत कैसे होती है? किन कारणों से समाज में सत्ता की व्यवस्थाएँ पनपती हैं? इस सत्ता व्यवस्था को कायम रखने के लिए कौन सी प्रक्रिया काम में लायी जाती है? इस प्रश्न का उत्तर पाना सत्ता की जड़ को समझने के लिए ज़रूरी है।

५ यह किस तरह प्रभावी होती हैं?

समाज में सत्ता कैसे काम करती है और यह कैसे निर्धारित होता है कि लोगों और समूहों के पास कैसी सत्ता रहेगी? सत्ता के आधार पर लोगों की आर्थिक और सामाजिक स्थिति कैसे निर्धारित होती है? सत्ता हमें किस तरह समाज में ढालती है – हमारे आपसी संबंध या व्यवहार को? सत्ता हम पर कैसा मानसिक प्रभाव डालती है – हम खुद अपने बारे में और दूसरे लोगों के बारे में क्या सोचते हैं? इन प्रश्नों के उत्तर देकर हम सत्ता को परिभाषित कर सकते हैं और उसका विश्लेषण कर सकते हैं। इस प्रश्न के उत्तर से ही हमें पता चलता है कि कौन लोग सत्ता से किस तरह प्रभावित होंगे, कौन इसके होने से लाभान्वित होगा या किसे इसका नुकसान होगा, और सत्ता समाज में कैसे काम करती है।

सत्ता की व्यवस्था को स्पष्ट रूप से समझना क्यों ज़रूरी है?

ऐक्टिविस्ट्स के रूप में, हमें हमेशा ही अपने आसपास के माहौल में दिखाई देने वाले अन्याय, असमानता, अलगाव, बहिष्कार, भेदभाव, सामाजिक कलंक और हिंसा को लेकर चिंता रहती है – लेकिन क्या हमनें कभी सोचा है कि इन सबके पीछे और हर सामाजिक समस्या का मुख्य कारण सत्ता ही है। क्या हमनें कभी यह सोचा है कि हर तरह का अन्याय और असमानता वास्तव में या तो **सत्ता दिखाये जाने** का परिणाम होता है या **सत्ता का रूप** है। वास्तविकता तो यह है कि मनुष्यों के आपसी सम्बन्धों और समाज की संरचना, दोनों का केंद्र बिन्दु सत्ता और इसकी व्यवस्था ही है। जब ऐक्टिविस्ट्स दूसरे लोगों के जीवन में बदलाव लाने की कोशिश करते हैं, या फिर उनके द्वारा अनुभव किए जा रहे अन्याय को समाप्त करने का प्रयास करते हैं, तो वास्तव में वे **सत्ता के समीकरणों** को बदलने की ही कोशिश कर रहे होते हैं।

हम में से अधिकतर लोग सत्ता को काफी हद तक पहचानते और समझते हैं – लेकिन अक्सर हम सत्ता को केवल उसी रूप में जानते हैं जिसमे वह सीधे और स्पष्ट रूप से हमें दिखाई पड़ती है, लेकिन हम सत्ता के बाकी, परोक्ष और अधिक जटिल स्वरूप को नहीं समझ पाते। उदाहरण के लिए, हम देखते हैं कि महिलाओं के आर्थिक रूप से स्वतंत्र न होने के कारण परिवार में प्राय: उनकी आवाज़ या विचार दब कर रह जाते हैं या फिर यह कि सामाजिक दृष्टिकोण और मान्यताओं के चलते समाज में पुत्र प्राप्ति को प्राथमिकता दी जाती है और लड़कियों के साथ भेदभाव होता है। तो ऐसे में हम, महिलाओं के लिए आय अर्जित करने के उपाय करते हैं या उन्हे छोटे ऋण उपलब्ध करवाने की कोशिश करते हैं या फिर हम लड़कियों के अधिकारों के बारे में जागरूकता अभियान चलाते हैं। फिर कुछ समय बाद हमें पता चलता है कि हमारे प्रयासों से कुछ मदद तो मिली है लेकिन मूल सामाजिक मान्यताएँ अब भी जस की तस बनी हुई हैं, या फिर अब महिलाएं अधिक कमा तो रही हैं लेकिन उनकी आय पर उनके पति का नियंत्रण बना हुआ है।

इसका कारण यह है कि हमारी कोशिश समस्या के **लक्षण** पर केन्द्रित है लेकिन हम उस समस्या की **जड़ में स्थित कारणों** तक नहीं पहुँच पा रहे। अगर हम चाहते हैं कि सत्ता संतुलन में प्रभावी और स्थायी बदलाव लाया जाये तो उसके लिए ज़रूरी होगा कि हमें सत्ता व्यवस्था के बारे में अधिक गहरी और स्पष्ट जानकारी हो। इसके लिए ज़रूरी है कि हम यह समझे कि सत्ता व्यवस्था किन अलग-अलग स्थितियों में कैसे काम करती है, इसके विभिन्न रूप और स्वरूप क्या हैं और सत्ता के ढांचे का निर्माण किस तरह से होता है और कैसे यह व्यवस्था बनी रह पाती है। सत्ता व्यवस्था के सभी स्वरूपों को भली-भांति समझना महिला अधिकार और जेंडर समानता के क्षेत्र में काम कर रहे ऐक्टिविस्ट्स के लिए विशेष तौर पर ज़रूरी होता है – क्योंकि जेंडर भेदभाव को बनाए रखने में सत्ता के **अदृश्य और वैचारिक आयामों** की भी उतनी ही महत्वपूर्ण भूमिका होती है जितनी कि संसाधनों तक पहुँच में कमी की।

इन प्रश्नों के उत्तर ढूंढ लेने से हमें विशिष्ट समुदायों या क्षेत्रों या विषयों में, जिन पर हम काम करते हैं, सत्ता के काम करने के तरीके को बदलने में सहायता मिल सकती है – इससे हम पता लगा सकते हैं, कि किसी विशेष परिस्थिति या संदर्भ अथवा स्थान पर सत्ता के कारण हो रहे परिणामों को किस तरह रोका जा सकता है, या फिर किसी विशेष वर्ग के लोगों के अधिकारों को कैसे सुरक्षित और सुनिश्चित किया जा सकता है।

१

सत्ता क्या है?

व्यक्तियों या समूहों द्वारा यह निर्धारित कर पाने की क्षमता को **सामाजिक सत्ता** कहते हैं कि किसको क्या मिलता है, कौन क्या काम करता है, कौन फैसले करता है कि क्या काम किया जाना है, और कौन लक्ष्य या एजेंडा का निर्धारण करता या करती है।

हमारे इतिहास में, दुनिया के अनेक भागों में कई दार्शनिकों, राजनैतिक विचारकों और ऐक्टिविस्ट्स नें समाज में मौजूद सत्ता को परिभाषित करने और इसका विश्लेषण करने के प्रयास किए हैं। इनमें से कई परिभाषाएँ जहां बहुत सरल थीं वहीं दूसरी अनेक परिभाषाएँ बहुत गूढ और गहरे अर्थ लिए थीं। नारीवाद का अध्यन्न करने वालों और ऐक्टिविस्ट्स नें इस दिशा में एक बड़ा कदम उस समय उठाया जब उन्हें यह पता चला कि सामाजिक सत्ता न केवल दुनिया में, बल्कि हमारे अपने घर-परिवारों, हमारे अपने निजी सम्बन्धों में भी दिखाई पड़ती है और काम करती है।

अगर हम सत्ता की इन सभी परिभाषाओं पर गौर करें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि लंबे समय तक सत्ता को केवल एक तरफा शक्ति के रूप में परिभाषित किया जाता रहा था जो दूसरे लोगों पर नियंत्रण रखने के लिए प्रयोग की जाती थी। यह कुछ ऐसे लोगों या समूहों के हाथ में मौजूद थी जिनमें दूसरों के कामों को, और उन्हे मिल रहे अवसरों को नियंत्रण में रखने की क्षमता थी। ऐसा भी समझा जाता था कि सत्ता का स्रोत खासकर **संसाधनो** पर नियंत्रण होने से है – उदाहरण के लिए जिन लोगों के पास ज़मीनें थीं, जिनके पास बहुत पैसा था, उनके पास स्वाभाविक रूप से उन लोगों की तुलना में अधिक सत्ता थी जो निर्धन अथवा भूमिहीन थे। लेकिन समय बीतने के साथ-साथ हमें यह पता चला कि सत्ता इससे कहीं अधिक जटिल व्यवस्था है – और वास्तविकता यह है कि समाज के विकास के साथ साथ सामाजिक सत्ता का भी विकास हुआ है और इसमें अनेक बदलाव आयें हैं। आज हम देखते हैं कि सत्ता केवल **नियंत्रण** होने मात्र से नहीं आती बल्कि इसका सीधा संबंध व्यक्ति या समुदाय की **क्षमता** से भी होता है, और जहां सत्ता का होना आंशिक रूप से संसाधनों पर नियंत्रण होने पर भी निर्भर करता है, वहीं यह स्पष्ट नहीं है कि संसाधनों को फिर से वितरित कर दिये जाने पर भी सत्ता के असंतुलन क्यों बने रहते हैं।

सत्ता को आज के संदर्भ में सबसे सही तरीके से इस तरह परिभाषित किया जा सकता है कि सत्ता[1] किसी व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के समूहों द्वारा यह निर्धारित कर पाने की क्षमता को कहते हैं कि:

[1] अरुणा राव और डेविड केलहर, 2002 के प्रति साभार धन्यवाद के साथ

किसको क्या मिलता है

यह केवल समाज में संसाधनों के बँटवारे से संबन्धित नहीं है, बल्कि इसका संबंध इससे भी है कि समाज में काम करने के अवसर, अधिकार और विशेषाधिकार किस तरह से बांटें जाते हैं – समाज में मौजूद जेंडर या समाज की संरचना को तो इस आधार पर आसानी से पहचाना जा सकता है कि भूमि का मालिकाना हक़ किसके पास है, स्कूल में पढ़ने के लिए कौन जाता है, किसकी बीमारी का इलाज पहले हो पाता है या किसे अधिक आराम और सुख-सुविधाएं मिलती हैं।

कौन क्या काम करता है

समाज में श्रम और काम का विभाजन किस तरह से हुआ है? यहाँ यह जान लेना महत्वपूर्ण है कि सत्ता केवल ऐसे उपयोगी कामों, जिनसे वस्तुएँ और सेवाएँ बनती हैं और धन अर्जन होता है, (जैसे भोजन उत्पन्न करना या कारखाने में काम करना) के श्रम के विभाजन मात्र से नहीं आती बल्कि यह और कई तरह के सामाजिक रूप से उपयोगी कामों (जैसे घर का काम, बच्चों की देखभाल, खाना बनाना, पानी लाना, ईंधन इकट्ठा करना) के विभाजन से भी आती है। इस को पढ़ने वाला व्यक्ति तुरंत यह समझ सकता है कि वस्तुओं के उत्पादन और प्रजनन आधारित उत्पादन, दोनों ही तरह के काम, अधिकतर समाजों में जेंडर के आधार पर ही वितरित किए जाते हैं।

कौन निर्णय लेता है

इस सत्ता का तात्पर्य कुछ हद तक किसी व्यक्ति के जीवन से संबन्धित विभिन्न पहलुओं के बारे में निर्णय लेने से भी है (जैसे कि विवाह किसके साथ हो, परिवार में से किसे स्कूल भेजना है) या परिवार के बारे में निर्णय (कौन सी फसल उगाई जाये, कहाँ रहा जाये, घर किराये पर कितना खर्च हो, आय अर्जित करने के लिए कैसा काम करना) या गाँव अथवा नगर के निर्णय, (कुल बजट को कैसे खर्च किया जाए, गाँव के किस कुएं का इस्तेमाल कौन कर सकता है, किस सड़क की मरम्मत हो, शौचालय या अस्पताल कहाँ बनाया जाए) या समुदाय या जाति समूह के निर्णय (कैसी प्रथाएँ लागू हों, झगड़े कैसे सुलझाए जाएँ) या देश के निर्णय (राष्ट्रीय कानून, नीतियाँ, बजट क्या होगा आदि) ले पाने का अधिकार सत्ता के अंतर्गत आता है।

कौन मुद्दे या एजेंडा निर्धारण करता है

आज, एजेंडा का निर्धारण कर पाने की शक्ति संभवत: सामाजिक सत्ता का सबसे महत्वपूर्ण पहलु बन गया है। एजेंडा या मुद्दों का निर्धारण कर पाने की सत्ता वास्तव में यह निर्णय लेने की क्षमता है कि क्या महत्वपूर्ण है और किस विषय पर आम चर्चा की जा सकती है। एजेंडा निर्धारित करने की सत्ता दिखती है इसमें कि अखबार के पहले पन्ने पर कौन सी खबर छपनी चाहिए और चौथे पांचवें पन्ने पर कौन सी। यह सत्ता परिवार जैसे निजी स्थानों और अंतर्राष्ट्रीय नीति निर्माण, राष्ट्रीय सरकार और मीडिया जैसे सार्वजनिक स्थानों पर भी काम करती है; और अक्सर सत्ता के इस रूप को हम देख नहीं पाते।

किसके निर्णय लेने की सत्ता अधिक मायने रखती है?

कभी-कभी देखा गया है कि विभिन्न संस्थाओं के निर्णय विरोधी होते हैं – उदाहरण के लिए हो सकता है कि राष्ट्रीय स्तर पर कानून निर्माता यह निर्णय लें कि सभी बच्चों के लिए स्कूली शिक्षा अनिवार्य है, लेकिन हो सकता है कि समुदाय या जनजाति अथवा धार्मिक गुरुओं का यह फैसला हो कि किशोरावस्था के बाद लड़कियों का स्कूल जाना उनकी प्रथाओं या संस्कृति के खिलाफ है, या फिर यह भी संभव है कि किसी परिवार में मुखिया (आमतौर पर पुरुष या कोई प्रभावी बूढ़ी महिला) ऐसा ही निर्णय ले – इन परिस्थितियों में, आम तौर पर परिवार या समुदाय के मुखिया द्वारा लिया गया निर्णय ही लागू किया जाता है क्योंकि लड़कियों को अपना जीवन इसी परिवार या समुदाय में व्यतीत करना है और वे इस निर्णय के विरुद्ध नहीं जाएंगी। इस तरह परिवार या समुदाय के फैसले के सामने देश की सरकार द्वारा लिया गया निर्णय निरर्थक और अप्रभावी हो जाता है।

एजेंडा निर्धारित करने की अदृश्य शक्ति

समाचार पत्र और टीवी चैनल हमें रोज़ उस दिन की 'महत्वपूर्ण' खबर की जानकारी देते हैं। हम ऐसा मान भी लेते हैं कि समाचार पत्र के मुख्य पृष्ठ पर छपी खबरें या टीवी चैनल पर चल रही खबरें ही पिछले 24 घंटों में घटी सबसे महत्वपूर्ण घटनाएँ है और राष्ट्रीय महत्व के मुद्दे हैं। हम यह भी मानते हैं की समाचार पत्र के चौथे या पांचवें पृष्ठ पर छपी खबर इन पहले पृष्ठ की खबरों से कम महत्वपूर्ण है। शायद यही कारण है कि, प्रधानमंत्री की चीन या अमरीका यात्रा या किसी बड़े खेल आयोजन की खबर पहले पृष्ठ पर छपने लायक खबर होती है जबकि गरीब किसानों द्वारा आत्महत्या या किसी अल्पसंख्यक समूह पर हुए हमले की खबर पांचवें पृष्ठ पर छपती है। दरअसल यह मीडिया के एजेंडा निर्धारित कर पाने की सत्ता का ही हिस्सा है – क्यों नहीं किसानों की आत्महत्या या किसी खास समुदाय के साथ हिंसा की खबर पहले पन्ने पर छपती? क्या कारण है कि इसे किसी राजनेता के विदेश दौरे से या किसी खेल आयोजन से कम महत्व दिया जाता है? कोई है जो हमारे सोचने के तरीके को प्रभावित करता है, हमारे लिए एजेंडा निर्धारित करता है, और हमें इसकी खबर तक नहीं होने पाती।

अंतर्राष्ट्रीय मामलों में
एजेंडा निर्धारित कर पाने की सत्ता

आज से लगभग दस या पंद्रह वर्ष पहले, विकास के विषय पर अंतर्राष्ट्रीय चर्चाओं में मुख्य विषय और चुनौती गरीबी दूर करना ही होता था। फिर उसके बाद इसमें एक बदलाव आता गया – अब हमें बताया जाने लगा कि पर्यावरण में तेज़ी से होने वाले बदलाव दुनिया के सामने सबसे बड़ी चुनौती हैं। हालांकि दुनिया के गरीब लोग भी पर्यावरण में आने वाले बदलावों से प्रभावित होते हैं लेकिन पर्यावरण के खराब होने में उनकी कोई भूमिका नहीं होती। लेकिन दुनिया भर के नेताओं और अनेक बहुपक्षीय संस्थाओं और विकास के लिए धन देने वाले बैंकों नें जलवायु परिवर्तन पर इतना अधिक ध्यान दिया है और मीडिया नें भी इस विषय को इतना महत्व दिया है कि निर्धनता जैसा गंभीर विषय लगभग अदृश्य ही हो गया है। आज हमें इस बारे में बहुत कम सुनने को मिलता है कि दुनिया में 1.4 अरब लोग आज भी गरीबी में रहते हैं (उनका प्रतिदिन का खर्च 100 रुपये से भी कम होता है) और इनमें से ज़्यादा संख्या महिलाओं और बच्चों की है। यहाँ तात्पर्य यह नहीं है कि जलवायु परिवर्तन से कोई अंतर नहीं पड़ता – अंतर पड़ता है लेकिन निर्धनता भी उतनी ही महत्वपूर्ण समस्या अवश्य है। वास्तविकता यह है कि जिन लोगों के पास एजेंडा निर्धारित करने की सत्ता है, वे हमारे दृष्टिकोण को बदलने तक में सक्षम हैं, हमारे लिए वे फैसला करते हैं कि हम किसे महत्वपूर्ण समझें। प्राय: उनके इस एजेंडा निर्धारित कर देने की प्रक्रिया अदृश्य ही होती है।

परिवार में
एजेंडा निर्धारित करना

परिवारों के भीतर भी एजेंडा निर्धारित करने की सत्ता से लोगों के जीवन पर प्रभाव पड़ता है। माला की उम्र 16 वर्ष है और वह पढ़ाई में बहुत अच्छी है। वह अपनी स्कूल की पढ़ाई खत्म करके मेडिकल कॉलेज में दाखिला लेना चाहती है। लेकिन माला के माता-पिता का मानना है कि लड़कियों के जीवन का पहला लक्ष्य शादी करना और परिवार बनाना होता है – और उसके समुदाय में यह चलन है कि लड़कियों की शादी उनके माँ-बाप तय करते हैं और उनकी शादी जल्दी ही कर दी जाती है। उसके माँ-बाप को चिंता है कि अगर वे माला के स्कूल पूरा करने तक उसके लिए कोई योग्य वर नहीं ढूंढेगे तो फिर उसकी शादी होनी कठिन हो जाएगी। माला जब भी मेडिकल कॉलेज में पढ़ने की बात करती है तो उसकी माँ उसे डांटने लगती है। घर में माला के बारे में हर बातचीत का मुद्दा सिर्फ उसकी शादी ही होता है, उसकी पढ़ाई नहीं। माला अपनी इच्छा को अपने परिवार के एजेंडा में शामिल करा पाने में सक्षम नहीं है। उसके पास एजेंडा निर्धारित करने की सत्ता नहीं है।

सत्ता कहाँ मौजूद होती है?

सामाजिक सत्ता मनुष्य जीवन के हर पहलू, हर क्षेत्र में और हर आयाम में मौजूद रहती है और कार्यरत होती है।

सत्ता कहाँ मौजूद होती है?

सामाजिक बदलाव के लिए काम कर रहे ऐक्टिविस्ट्स के रूप में हमारा ध्यान यह जानने पर रहता है कि खासकर तीन मानवीय सम्बन्धों में सामाजिक सत्ता किस तरह कार्यशील होती है।

व्यक्तियों के बीच के संबंध

लोगों के बीच सम्बन्धों, मित्रों मे आपसी संबंध, काम करने के स्थान पर सहकर्मियों के बीच संबंध आदि में सत्ता कार्यशील होती है। हम मनुष्यों के बीच परस्पर आपसी सम्बन्धों में सत्ता पर इसलिए ध्यान देते हैं क्योंकि इन्हीं सम्बन्धों में हमें हिंसा और महिलाओं या खुद को महिला मानने और कहलाने वाले प्रत्येक व्यक्ति के प्रति भेदभाव सबसे अधिक देखने को मिलता है।

सामाजिक सामुदायिक समूहों के बीच संबंध

समान पहचान वाले लोगों के अलग-अलग समूहों के बीच में भी सत्ता की व्यवस्था मौजूद रहती है। उदाहरण के लिए हम जेंडर की पहचान (महिला, पुरुष, ट्रान्सजेंडर), जाति, वंश, वर्ग, धार्मिक आस्थाओं, योग्यता/ विकलांगता, यौनिक रुझानों, भौगोलिक स्थिति (ग्रामीण या शहरी), और व्यवसाय के आधार पर विभाजित समूहों के बीच सत्ता को काम करते हुए देख पाते हैं। सामाजिक समुदायों के बीच सत्ता के कार्यरत होने पर हमारा ध्यान इसलिए जाता है क्योंकि समाज में वर्ग विभाजन या ऊंच-नीच, अलगाव, बहिष्कार, कलंक, भेदभाव, झगड़े और हिंसा इसी के कारण होते हैं जिसकी वजह से जहां कुछ समूहों के लोगों का शोषण होने लगता है वहीं कुछ समूह दूसरों पर हावी हो जाते हैं। यही वे व्यवस्थाएँ हैं जिनके कारण कुछ लोगों को सत्ता और अधिकार मिलते हैं और कुछ को इनसे वंचित रखा जाता है।

राजनैतिक और आर्थिक संरचनाओं के बीच संबंध

किसी देश के विभिन्न राज्यों के बीच, दो देशों के बीच या देशों के समूहों (जैसे 'विकसित' और 'विकाशील देश', 'उत्तरी देश' या 'दक्षिणी देश' या फिर हाल ही में उन देशों के समूह जो आर्थिक और राजनीतिक रूप से शक्तिशाली होकर उभरे हैं (*ब्रिक्स* समूह जिसमे ब्राज़ील, रूस, भारत, चीन और दक्षिण अफ्रीका हैं) के बीच सत्ता की व्यवस्था कार्यशील होती है। सत्ता की इस व्यवस्था में फिर ताकतवर व्यापार घराने भी शामिल हो जाते हैं जो प्राय: किसी भी राष्ट्रीय सरकार के नियंत्रण से न केवल परे होते हैं, बल्कि राष्ट्रीय नीतियों को अपने हक़ में तैयार करवाने और नागरिकों की सुरक्षा के लिए बने नियमों का उल्लंघन करने तक में सक्षम होते हैं। इन राजनैतिक और आर्थिक संरचनाओं में हमें आज के उग्रवादी नेटवर्कों और कट्टरपंथी समूहों के साथ-साथ नशीले पदार्थों, लोगों और हथियारों की तस्करी में संलिप्त समूहों को भी शामिल कर लेना होगा। इन सभी समूहों नें असीम सत्ता हासिल कर ली है, इनकी सत्ता देशों की सरकारों और चुने हुए प्रतिनिधियों के साथ, हम साधारण नागरिकों के जीवन पर भी चलती है।

व्यक्ति में मौजूद शक्ति

हम यह भी जानते हैं कि हम सभी में भी शक्ति केन्द्रित रहती है। शायद यही कारण है कि इतिहास में न जाने कितनी बार, कितने ही लोग और समूह अन्याय और दमन के विरोध में उठ खड़े हुए हैं जबकि उनका सामना ऐसी ताकतों से था जो उनसे कहीं ज़्यादा शक्तिशाली थीं और आसानी से उनके विद्रोह को दबा पाने में सक्षम थीं। हमनें अपने परिवारों में भी उन महिलाओं को देखा है जो न जाने कहाँ से असीम बल और दृढ़शक्ति के साथ सभी सामाजिक मान्यताओं और प्रथाओं को किनारे कर अपने खुद के चुने हुए मार्ग पर चलने का साहस जुटा लेती हैं – ऐसी महिलाएं जिन्होने विवाह करने से इंकार कर दिया, जो पढ़ाई करने के अपने अधिकार को पाने के लिए लड़ीं, जिन्होने सती प्रथा, दहेज की मांग, जाति से जुड़े कलंक, यौन हिंसा जैसे मुद्दों पर विरोध जताया, जिन्होने अपनी शक्लों-सूरत, वंश, जातियता, यौन रुझान या जेंडर पहचान, विकलांगता के कारण अपने साथ हो रहे भेदभाव का विरोध करने का साहस किया। किसी नें भी इन महिलाओं को यह साहस कर पाने के लिए 'सत्ता' प्रदान नहीं की थी, इन्होने अपने भीतर के साहस को बटोर कर यह शक्ति पायी! इस तरह, हम सब में यह एक शक्ति निहित होती है बस यह अलग बात है कि हम इस शक्ति को पहचान नहीं पाते या इसका उपयोग नहीं करते।

शक्ति का मिलाजुला स्वरूप
होदा की कहानी

आज शुक्रवार की सुबह थी। होदा सुबह पाँच बजे ही उठ गयी थी, उसने अपने हाथ और पोलियो ग्रस्त पैरों को धोया और सुबह की नमाज़ पढ़ने लगी। इसके बाद वह सुबह के नाश्ते के लिए आग जलाने रसोई में गयी और परिवार के लिए नाश्ता तैयार करने में लग गयी। कुछ समय बाद उसकी सास रसोई में आई और उसने देखा कि होदा नें पहले ही नाश्ता लगभग तैयार कर लिया है। सास नें होदा को डांटा कि उसने सुबह की नमाज़ क्यों नहीं पढ़ी। सास नें होदा को चांटा रसीद किया और लात भी लगाई और कहने लगी कि वह तो सीधे दोज़ख में जाएगी। होदा नें कुछ नहीं कहा और चुपचाप काम में लगी रही।

नाश्ता तैयार कर लेने के बाद, होदा कढ़ाई करने बैठ गयी – होदा अपने शौहर की कमाई में हाथ बंटाने के लिए हर रोज़ एक व्यापारी के लिए स्कार्फ, शाल और जैकट पर कढ़ाई करती थी। उसका शौहर एक चाय की दुकान पर काम करता था। लेकिन अब होदा का काम धीरे-धीरे कम हो चला था – व्यापारी का कहना था कि बाज़ार में मंदी है। अब होदा को आज से पाँच साल पहले वाली कमाई करने के लिए ज़्यादा घंटों तक काम करना पड़ता था और उसके अलावा घर का काम तो था ही। शाम को बच्चों के स्कूल से वापिस आने पर और उन्हें कुछ खाने के लिए देने के बाद, होदा दिन भर में किए हुए अपने काम को लेकर बाज़ार के लिए निकली। समाज के रिवाज के मुताबिक उसने बुर्का पहना और अपना चेहरा भी ढक लिया।

व्यापारी के यहाँ पहुँचने पर उसे रोज़ की तरह ताने सुनने को मिले: 'लो देखो वो आ गयी, काले लबादे वाली औरत! यह गूंगी और बहरी लंगड़ी जो न कुछ कहती है न सुनती है। जिसकी कढ़ाई भी इतनी बेकार है कि कोई खरीदना नहीं चाहता। चलो दिखाओ मुझे, आज तुमने कितना बेकार का काम किया है!' होदा नें चुपचाप पिछले कुछ दिनों में तैयार किए दर्जन भर स्कार्फ, जो उसने रोज़ लगभग 10 घंटे, झुक कर, थके कंधों और गर्दन के साथ, अंगुलियाँ दुखा कर काम करते हुए तैयार किए थे, दुकानदार को थमा दिये।

व्यापारी नें उसके काम को एक नज़र देखा और फिर उसे पिछले हफ्ते इतने ही काम के लिए दिये गए पैसों से भी कम कुछ रकम पकड़ा दी। 'लेकिन हुज़ूर....' कहकर होदा नें विरोध जताना चाहा। "क्या, क्या?" दुकानदार दहाड़ा। "क्या पैसे पसंद नहीं आए? तो ले जाओ अपना यह बेकार सा काम और निकल जाओ यहाँ से!" होदा जानती थी कि वह हार गयी है। वह गरीब थी, औरत थी, अनपढ़ थी, विकलांग थी, और फिर एक अल्पसंख्यक समुदाय से थी – उसका मुक़ाबला किसी एक ताकत से नहीं था, बल्कि अनेक ताक़तें मिल कर उसे हराने में लगी थीं।

अपने भीतर मौजूद शक्ति
शमीम की कहानी

शमीम अख्तर की इस कहानी से हमें पता चलता है कि अपने भीतर मौजूद शक्ति का प्रयोग करने पर हम कितना कुछ हासिल कर सकते हैं। शमीम पाकिस्तान के इस्लामाबाद में रहने वाली, गरीब परिवार की एक साधारण महिला है – शमीम कोई सामाजिक कार्यकर्ता नहीं है, और न ही किसी संगठन या कार्यकर्ता नें उन्हे 'सशक्त' बनाया – वे तो अपने हालातों के चलते, सभी बाधाओं से लड़ते हुए अपने मरहूम पति की तरह ही एक ट्रक ड्राईवर बनने में सफल रहीं।

जब शमीम नें अपना परिवार चलाने के लिए ट्रक ड्राईवर बनने के बारे में सोचा, तो उन्होने समाज में उठने वाली उँगलियों की परवाह नहीं की और न ही यह नहीं सोचा कि 'लोग क्या कहेंगे', या उन्हें पुरुषों द्वारा परेशान किया जाएगा या उनकी सुरक्षा को खतरा बना रहेगा; उन्होने स्थानीय ड्राइविंग स्कूल द्वारा मना करने पर भी हिम्मत नहीं हारी और थक कर स्कूल नें उन्हे ड्राइविंग सिखाने के लिए दाखिला दे दिया।

आज, एक ट्रक ड्राईवर के रूप में दूसरे ट्रक ड्राईवर उनकी इज्ज़त करते हैं और बराबरी का दर्जा देते हैं या माँ या बहन मानते हैं। अब शमीम के इस हौसले और आत्मविश्वास को आप इसके अलावा क्या कहेंगे कि उनमें खुद शक्तिशाली होने का जज़्बा है और वे अपने भीतर की शक्ति को महसूस करती हैं? यह सही है कि हम सब शमीम की तरह ही जाँबाज नहीं हो सकते, लेकिन हम अपने भीतर की शक्ति को तो पहचान ही सकते हैं।

आप शमीम की कहानी, उनकी अपनी जुबानी
https://youthkiawaaz.com/2016/10/pakistan-first-woman-truck-driver/
पर सुन भी सकते हैं।

सत्ता कहाँ से आती है?

सामाजिक सत्ता को जन्म देने वाले संसाधन केवल आर्थिक संसाधन ही नहीं होते।

शुरुआत में संसाधनों तक पहुँच और नियंत्रण से समाज में सत्ता मिलती है। अनेक कारणों से कुछ व्यक्तियों या समूहों के पास दूसरों की तुलना में संसाधनों पर अधिक नियंत्रण होता है और वे सत्तावान बन जाते हैं।ये केवल आर्थिक संसाधन ही नहीं होते। दरअसल आज की दुनिया में सामाजिक सत्ता मुख्यत: चार तरीकों से मिलती है।

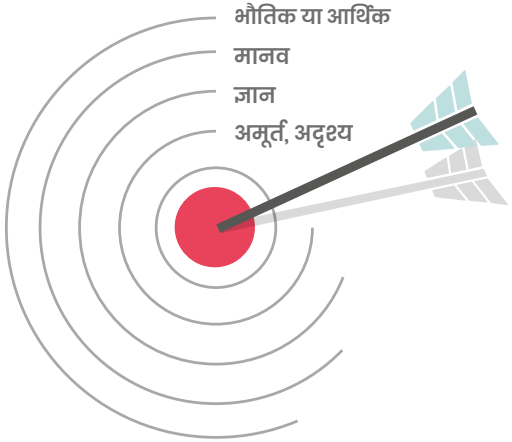

भौतिक या आर्थिक संसाधन

हम में से अधिकांश लोग यह जानते हैं कि भौतिक या आर्थिक संसाधनों में क्या शामिल है – ये हैं भूमि, घर दुकान जैसे अचल संसाधन, गहने और धन। अक्सर यह माना जाता है कि हर तरह की सामाजिक सत्ता का मूल इन आर्थिक संसाधनों का होना है, लेकिन यह बात गलत है। यह सही है कि आर्थिक संसाधनों से सत्ता मिलती है, लेकिन इस सत्ता को पाने के दूसरे, कम दिखाई पड़ने वाले संसाधन भी हैं जिनका बहुत महत्व होता है और बढ़ता जा रहा है।

मानव संसाधन

लोगों के शरीर और उनके श्रम पर नियंत्रण रख पाना, सामाजिक सत्ता का एक प्रमुख स्रोत होता है। महिलाओं के लिए यह समझना अधिक आसान है – हमारे शरीर, यौनिकता और प्रजनन क्षमता पर अक्सर दूसरे लोगों का नियंत्रण होता है। महिलाएं सेक्स के बारे में फैसले नहीं ले पाती, (वे अपने पति को सेक्स के लिए मना नहीं कर पातीं) या उन्हे संतान पैदा करनी है या नहीं, और कितनी। हम कहाँ जा सकती है, हम कैसी दिखें, हम कहाँ रह सकती हैं, ये सभी फैसले दूसरों द्वारा लिए जाते हैं – हमें यह अधिकार नहीं है कि हम अपनी मर्ज़ी से कहीं जाएं या अकेले घूमें, हमें क्या पहनना है, या उधर न जाएँ जहां सिर्फ आदमी ही जाते हों। सड़कों व सार्वजनिक बसों में महिलाओं के साथ छेड़-छाड़ होने, अंधेरा होने के बाद घर से बाहर न जाने, तंग कपड़े न पहने, अपने मूंह और बदन को ढककर रखें, इस तरह के सभी प्रतिबंध औरतों पर लगाया जाना बिलकुल सामान्य समझा जाता है, लेकिन यह सब हमारे शरीर पर रखे जाने वाले नियंत्रण हैं, और ये उस स्वतन्त्रता पर भी नियंत्रण हैं जिसे हमारा शरीर पाना चाहता है।

हमारे काम करने की क्षमता को – हमारे श्रम को नियंत्रित करना भी मानव संसाधनों पर नियंत्रण रखने के समान है और यह भी सत्ता का एक स्रोत होता है। अधिक सत्ता रखने वाले व्यक्ति ओर समूह दूसरों के श्रम पर नियंत्रण रखते हैं – और उनकी यह क्षमता जेंडर (जैसे, पुरुषों को महिलाओं के श्रम और उनके शरीर पर नियंत्रण रखने की सत्ता होती है), वर्ग, जाति, वंश, जातियता, राष्ट्रियता ओर दूसरे कारकों के आधार पर हो सकती है। जैसे भारत में जाति व्यवस्था इस जटिल नियंत्रण पर आधारित रही कि कौन क्या काम करता था और कुछ कामों (दिमाग से जुड़े या फिर व्यापार) को दूसरे मेहनत, सफाई या मैला साफ करने वाले (जैसे नाई, धोबी, जमादार, चमढ़े का काम) कामों की तुलना में अधिक मूल्यवान समझा जाता था। ऐसे 'नीच' काम को करने वाले लोगों के साथ भेदभाव बरता जाता था, उन्हें अछूत समझा जाता था हालांकि यह काम महत्वपूर्ण हैं।

सामाजिक सत्ता पाने और बनाए रखने के लिए ज्ञान सत्ता पर नियंत्रण

भारत में जाति प्रथा की उत्पत्ति और इसका एकीकरण, सामाजिक सत्ता को बढ़ाने के लिए ज्ञान की सत्ता के प्रयोग का एक बढ़िया उदाहरण है। भारत में जाति प्रथा केवल लोगों के व्यवसाय पर आधारित नहीं थी, बल्कि इसका आधार यह भी था कि कौन व्यक्ति किस तरह का ज्ञान और जानकारी अर्जित कर सकता था। इन दोनों के बीच गहरा आपसी संबंध होने के कारण ऐसा नियम रखा गया था। जाति के अंतिम समूह के लोगों को ज्ञान के स्थानों (जैसे किसी स्कूल या मठ) आदि के पास भी नहीं जाने दिया जाता था और इनकी परछाईं भी किसी पुस्तक पर पड़ना निषिद्ध समझा जाता था! शूद्र और दलित लोग, हालांकि जनसंख्या का विशाल भाग होते थे, लेकिन फिर भी इन्हें शिक्षा से वंचित रखकर समाज के तथाकथित ऊंची जाति के लोग इनपर अपनी सत्ता और आधिपत्य बनाए रखते थे।

महिलाओं के संदर्भ में यह स्थिति और भी रोचक थी। हालांकि ब्राह्मण और क्षत्रिय जाति की महिलाओं को शिक्षा पाने का अधिकार था, लेकिन अक्षरज्ञान होने और धार्मिक पुस्तकों के बारे में शिक्षा पर बहुत नियंत्रण था और बहुत सीमित शिक्षा ही उन्हें मिलती थी। इसके अलावा मासिक धर्म के दिनों और प्रसव के बाद महिलाओं को किसी पवित्र धार्मिक पुस्तक को छूने या पूजाघर में प्रवेश की अनुमति नहीं थी। ऐसे में निचली जातियों, विशेषकर शूद्र या दलित महिलाओं के तो शिक्षित हो पाने का प्रश्न ही नहीं उठता था।

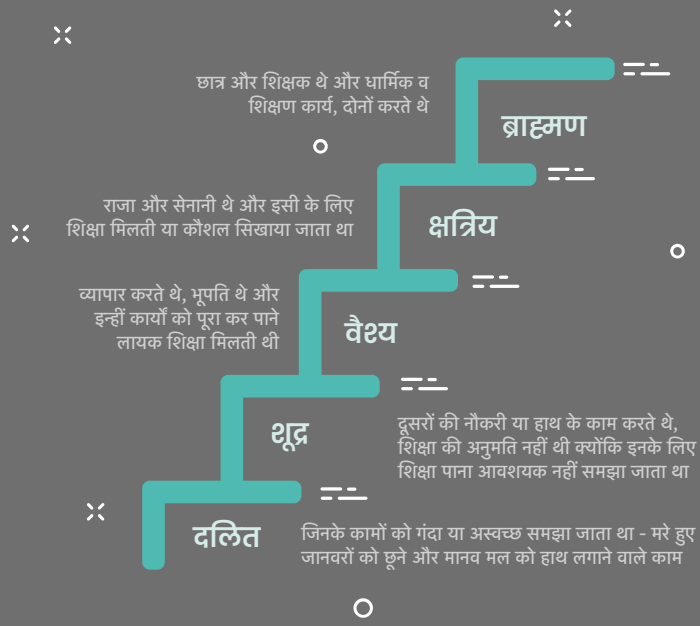

भारत के पिछले एक हज़ार वर्ष के इतिहास में जाति प्रथा और उत्पीड़न के विरुद्ध अनेक आंदोलन हुए। प्रतीकात्मक विरोध का एक तरीका यह था कि उत्पीड़ित जातियों के लोग जबरन स्कूलों, मंदिरों में घुस जाते थे और धार्मिक पुस्तकों को छू लेते थे। लेकिन आज तक जाति आधार पर भेदभाव के खिलाफ कानून बन जाने के बाद और सभी को शिक्षा की गारंटी दिये जाने पर भी, 'निचली जाति' के या दलित लोगों पर अनेक अत्याचार देखने को मिलते है। आज भी व्यवस्था में ऐसे भेदभाव जारी हैं जिनमे पढ़ाई के दौरान दलित बच्चों को कक्षा के बाहर बैठना पड़ता है।

ज्ञान संसाधन

आज की दुनिया में ज्ञान और जानकारी, सत्ता के और भी अधिक बड़े स्रोत बन कर उभरे हैं और इनका आर्थिक संसाधनो से बहुत निकट संबंध होता है। बेहतर शिक्षा, व्यावसायिक या तकनीकी कौशल रखने वाले लोग, भले ही वे आर्थिक रूप से सम्पन्न घरों से न हों, फिर भी वे समाज में बहुत अधिक प्रभावी बन सकते हैं। गाँव के स्तर पर भी कोई गरीब व्यक्ति, जो पढ़-लिख सकता है, उसके पास अनपढ़ लोगों की तुलना में अधिक सामाजिक सत्ता होती है – इस तरह के पढे-लिखे लोग यह जानकारी पाने में सफल रहते हैं, कि गाँव की पंचायत या परिषद का बजट क्या है या सरकार द्वारा लागू की जा रही नयी योजना की कोई जानकारी भी पा सकते हैं या फिर बैंक द्वारा कर्ज़ देने के किसी नए कार्यक्रम के बारे में जानकारी पा सकते हैं। बेहतर जानकारी की मदद से नयी संपत्ति या उत्पादक स्रोत प्राप्त किए जा सकते हैं और जानकारी से ही समुदाय में व्यक्ति की सामाजिक स्थिति और प्रभाव भी बढ़ सकता है। इसके ठीक उल्टे, जिन लोगों के पास अधिक आर्थिक संसाधन होते हैं, उनके पास जानकारी और ज्ञान पाने के साधन भी अधिक होते हैं।

अदृश्य या अमूर्त संसाधन

दक्षिणी एशिया की नारीवादी अर्थशास्त्री नईला कबीर नें हमें इस विचार के बारे में बताया। उन्होने बताया कि सामाजिक सत्ता का एक अन्य स्रोत अक्सर अदृश्य रहने वाले संसाधन भी होते हैं – ये ऐसे संसाधन हैं जिन्हे हम देख या छू नहीं सकते, लेकिन वे होते बिलकुल असल और दिखाई देने वाले संसाधनो की तरह ही हैं। लोगों से आपकी जान-पहचान, सामाजिक सहायता के नेटवर्क, सामाजिक आंदोलन या किसी यूनियन का सदस्य होना या फिर ऐसे ही सम्बन्धों पर आधारित संसाधन, जो होते तो बिलकुल वास्तविक हैं लेकिन धन, ज़मीन या श्रम की तरह दिखाई नहीं देते। सामाजिक रूप से संसाधन युक्त लोग दूसरों को शक्ति-विहीन रखने के लिए इन अमूर्त संसाधनों का प्रयोग करते हैं – वहीं उपेक्षित लोग भी अक्सर इन्हीं अमूर्त संसाधनो का प्रयोग कर उन अवसरों को पाना चाहते हैं जो उन्हे नहीं मिल पाते – उदाहरण के लिए, कठिन समय में एक दूसरे की, नौकरी पाने में, स्कूल या कॉलेज में दाखिला लेने में मदद करना, या किसी ऐसे बड़े अधिकारी या नेता से आपकी मुलाकात करा देना जिसके दफ्तर में बिना इस तरह की मदद के पहुँच न सकते हों।

व्यक्ति के भीतर की शक्ति

यहाँ पुस्तक के पहले एक खंड में रखे गए बिन्दु को दोबारा बताना ज़रूरी है: प्रत्येक **व्यक्ति के भीतर भी शक्ति का स्रोत विध्यमान रहता है**, हालांकि लोगों को अक्सर यह भ्रम करवा दिया जाता है कि सामाजिक सत्ता व्यवस्था में अपनी स्थिति – जैसे वर्ग, जाति, वंश, जातीयता, धर्म, जेंडर पहचान, व्यवसाय अथवा कुछ और - के कारण वे कमजोर या कमतर हैं। व्यक्ति के भीतर की शक्ति भी एक अदृश्य संसाधन की तरह होती है – जो न केवल व्याख्या करने में कठिन है बल्कि जिसे किसी से छीनना या चुरा लेना भी असंभव होता है। अपने भीतर मौजूद इस आंतरिक शक्ति को पहचान पाना ही 'सशक्तिकरण' है। जब हम अपने भीतर स्थित इस शक्ति को दूसरों के अंदर स्थित शक्ति के साथ मिला पाने में सफल हो जाते हैं, तो हम दुनिया की किसी भी सत्ता संरचना को ढहा सकने या बदलने में कामयाब हो सकते हैं!

शीला की कहानी

शीला बहुत ही उत्सुक, समझदार किन्तु विद्रोही स्वभाव की लड़की थी। वह हमेशा पूछती थी कि 'क्यों' – जब भी उसे लड़की होने के कारण किसी काम से मना किया जाता था। उसकी दादी के अलावा उसके परिवार के सभी लोग उसके इस प्रश्न पूछने से परेशान थे। "लड़की को पूछने दो, दो कोई समझदार जवाब!" दादी अक्सर कहतीं, "हमारे जैसी औरतें अगर दूसरों से दब कर रहती रहीं, तो इसका यह मतलब तो नहीं कि यह भी ऐसा ही करे"। वे शीला से कहती, "तुम सवाल पूछती रहो और अगर तुम जवाब से संतुष्ट न हो तो उस बात को मत मानो। तुम वही करो जो तुम्हें ठीक लगता हो"। दादी शीला से कहतीं कि उसे पढ़ना चाहिए और बड़ी होकर वकील या डॉक्टर बनना चाहिए, फिर नौकरी करके अपना खुद का पैसा कमाना चाहिए। दादी शीला को समझाती, "बैंक में अपना अकाउंट खोलो, अपना पैसा अपने पति के हाथ में मत देना! भगवान नें तुम्हें इतनी अक्ल सिर्फ घर पर बैठकर खाना पकाने या गधों की तरह काम करने के लिए नहीं दी है, क्योंकि तुम एक लड़की हो। अपनी ज़िंदगी को सँवारो। मेरी तरह मत रहना"।

अपनी दादी के समझाने-बुझाने के कारण, शीला बड़ी होकर बहुत आत्मबल वाली लड़की बनी। भले ही उसके पास कोई पदवी न थी या फिर कोई दूसरा उसे शक्तिशाली नहीं समझता था। भले ही कक्षा में मॉनिटर कोई दूसरा ही हो, फिर भी सभी शीला से ही सलाह लेते थे। उससे बड़े भाई बहन भी अपने कामों में उसकी सलाह मांगते थे। इसका नतीजा यह हुआ कि बड़ी होने पर जब शीला नें अलग-अलग विकास संस्थाओं में काम किया तो यहाँ भी हर जगह उसकी बात सुनी जाती, उसकी सलाह ली जाती। भले ही शीला अपने कार्यालय में 'बॉस' नहीं थी फिर भी अपने आत्मबल के कारण उसमें हमेशा अंदरूनी शक्ति का तेज दिखता था।

४

सत्ता दिखती कैसी है?

हम सभी सत्ता के बारे में जानते हैं, हमनें इसे देखा और महसूस किया है और जब भी हम अपने पर या दूसरों पर इस सत्ता को प्रयोग होते हुए देखते हैं तो हमें इसका पता भी चलता है। लेकिन हमारे ये सभी अनुभव उन परिस्थितियों के हैं, जहां सत्ता के स्वरूप को देख पाना सरल होता है, जब यह केवल अपने एक स्वरूप में प्रकट होती है। वास्तव में सत्ता के तीन स्वरूप हैं – वह जो दिखाई देता है, वह जो छुपा रहता है और वह जो अदृश्य है।

सत्ता के तीन स्वरूप[2]

दिखाई देने वाली या प्रत्यक्ष सत्ता वह है जिससे हम सभी भली-भांति परिचित हैं और हम सभी ने इसका अनुभव भी किया है। प्रत्यक्ष सत्ता को हम लगभग हर रोज़ अपने निजी और सार्वजनिक स्थानों में देख पाते हैं।

सार्वजनिक जीवन में

लोगों की पसंद, संसाधनों तक उनकी पहुँच, निर्णय लेने की प्रक्रिया में उनकी आवाज़ और समाज के नियम, कानून पर प्रभाव डालने की क्षमता को दिखाई पड़ने वाली सत्ता कहते हैं। राजनैतिक नेताओं, पुलिस, सेना और न्यायपालिका के हाथ में हम ऐसी ही सत्ता का बल देखते हैं; समाज में धर्म प्रमुखों, बहु-राष्ट्रीय कंपनियों के प्रमुखों, कबीलों से सरदारों, ट्रेड यूनियन जैसे सामाजिक संगठनो या गैर-सरकारी अथवा महिला संगठनों के पास भी इसी तरह की सत्ता होती हैं। सार्वजनिक जीवन में कुल राष्ट्रीय बजट में से शिक्षा, स्वास्थ्य और रक्षा पर कितना खर्च हो; या गाँव में उपलब्ध कुल राशि सड़क की मरम्मत के लिए खर्च हो या फिर स्कूल को ठीक करने के लिए; और इस तरह के निर्णय लेने की प्रक्रिया में किसकी भागीदारी रहेगी और कौन इससे अलग रखा जाएगा, यह सब प्रत्यक्ष दिखने वाली सत्ता के तहत ही तय होता है। यही कारण है कि प्रभावी और शक्तिशाली आर्थिक और सामाजिक हैसियत रखने वाले समूहों के हितों का (उनकी आर्थिक क्षमता, धनसंपदा, पद, जेंडर, वंश, वर्ग, जातियता, जाति के आधार पर उनकी हैसियत के कारण) हमेशा ही राजनीतिक व्यवस्था में ध्यान रखा जाता है और गरीब निर्धन लोगों को अनदेखा कर दिया जाता है, भले ही ये निर्धन लोग तादाद में ज़्यादा ही क्यों न हों।

निजी जीवन में

परिवार, कुटुंब या वैवाहिक सम्बन्धों में भी प्रत्यक्ष या दिखाई देने वाली सत्ता सार्वजनिक जीवन की तरह ही काम करती है, लेकिन यहाँ किसी औपचारिक रूप से प्राप्त अधिकारों (जैसे कि पुलिस, सेना, सरकार या न्यायालय के पास होते है) की तुलना में निजी जीवन में सत्ता उन सामाजिक मान्यताओं और प्रथाओं से उपजती है जो यह निर्धारित करती है कि कौन किसपर नियंत्रण कर पाएगा। निजी जीवन में प्रत्यक्ष सत्ता जेंडर आधारित होती है और आयु, वैवाहिक स्थिति, संपत्ति पर नियंत्रण आदि के आधार पर वर्ग-निर्धारण भी करती है। किसी परिवार में पुरुष मुखिया या परिवार की बड़ी विवाहित स्त्रियाँ (सास) द्वारा प्रयोग किये जाने वाले अधिकार इस सत्ता का एक अच्छा उदाहरण हैं। इसका एक अन्य उदाहरण है परिवार में घर की देखभाल करने के और उत्पादक, दोनों कामों में श्रम का बंटवारा और निर्णय लेने के अधिकार का विभाजन जेंडर के आधार पर किया जाना। प्रत्यक्ष सत्ता ही यह निर्धारित करती है कि महिलाएं घर के ज़रूरी और जीवन जीने के लिए आवशयक घरेलू और उत्पादक कार्य तो करेंगी लेकिन उन्हें समान वेतन पाने का अधिकार नहीं होगा, न ही उनका अपनी खुद की कमाई पर अधिकार होगा, उनके विरासत के अधिकार नहीं होंगे, उनका अपने शरीर पर भी नियंत्रण नहीं रहेगा, अर्थात वे अपनी मर्ज़ी से कहीं आ-जा नहीं सकेंगी, संबंध नहीं बना सकेंगी, यौन रुझान प्रकट नहीं कर पाएँगी या प्रजनन नहीं कर पाएँगी। प्रत्यक्ष सत्ता के कारण ही बेटों के जन्म को ज़्यादा महत्व दिये जाने वाले व्यवहार भी दिखाई पड़ते हैं।

[2] लिसा वेनेकलसेन और वालेरिए मिल्लर के प्रति साभार धन्यवाद, ए न्यू वीव ऑफ पीपल, पावर अँड पॉलिटिक्स, जस्ट एसोशिएटस (JASS) 2002

अदृश्य या अप्रत्यक्ष सत्ता – इसे एजेंडा निर्धारित करने की क्षमता कहते हैं – लोगों के निर्णय को प्रभावित कर पाने की क्षमता। कौन है जो बिना दिखाई दिये आपके निर्णयों को प्रभावित करता है, जिसकी बात सुनी जाती है या खास विषय पर जिसकी सलाह ली जाती है।

अप्रत्यक्ष सत्ता का मतलब, लोगों को हासिल होने वाले अवसरों को प्रभावित कर पाना, प्रत्यक्ष रूप से सामने आए बिना या किसी दिये हुए अधिकार के न होते हुए भी संसाधनों तक लोगों की पहुँच और उनके अधिकारों को प्रभावित कर पाना है। अदृश्य या एजेंडा निर्धारित करने की यह क्षमता भी निजी और सार्वजनिक, दोनों क्षेत्रों में कार्य करती रहती है।

सार्वजनिक जीवन में

अदृश्य सत्ता को हम राजनीतिक सत्ता और धार्मिक गुरुओं, निजी कंपनियों, नशीले पदार्थों और हथियारों के विक्रेताओं के बीच मिलीभगत के रूप में कार्यशील होता हुआ देख सकते हैं जिनके बीच निकट किन्तु छुपे संबंध होते है। यही कारण है कि ये लोग बिना किसी प्रत्यक्ष अधिकार या सत्ता के, राजनीतिक फैसलों और नीतियों को प्रभावित कर पाने में सफल रहते हैं। होन्डुरस में सरकार और निजी कंपनियों के साथ मिलकर निजी मिलिशिया द्वारा बेर्टा करकेरस की हत्या के षड्यंत्र की वजह यही थी। डोनर संस्थान और बड़े फ़ाउंडेशन भी इसी तरह अपनी अदृश्य सत्ता का प्रयोग कर यह निर्धारित करते हैं कि सामाजिक बदलाव लाने का सबसे सही तरीका क्या होगा, या सामाजिक बदलाव किस तरह से होना चाहिए, और इस तरह से वे अप्रत्यक्ष रूप से सामाजिक बदलाव की संस्थाओं द्वारा किए जाने वाले कामों पर भी नियंत्रण रखते हैं। यही डोनर और फ़ाउंडेशन यह निर्धारित करते हैं कि सामाजिक बदलाव के संगठन किन विषयों पर काम करें और किन पर नहीं। राष्ट्रीय बजट में विभिन्न कार्यों के लिए धन के बँटवारे में भी अदृश्य सत्ता का प्रयोग दिखाई देता है कि कौन से कानून बनाए जाएँ और कौन से नहीं। उदाहरण के लिए अभी हाल ही तक घरेलू हिंसा को एक 'निजी मामला' समझा जाता था जिसके लिए किसी कानून में किसी तरह की सज़ा का प्रावधान नहीं था; हाल ही तक काम करने के स्थान पर यौन उत्पीड़न करने वालों को सज़ा देने के लिए कोई कानून नहीं था; बलात्कार जैसे यौन हिंसा के अपराधों में पीड़ित को ही अपराध सिद्ध करना होता था और आरोपी का खुद को निरपराध साबित करने का कोई दायित्व नहीं होता था।

निजी जीवन में

हमें अदृश्य सत्ता के होने का आभास तब होता है जब हम जेंडर व अन्य भेदभावों को परिवार और समाज में चलते व मज़बूत होते देखते हैं। उदाहरण के लिए घर पर, महिलाएं अपने बेटे-बेटियों को खुद जेंडर आधारित सामाजिक प्रथाओं की जानकारी देती है कि एक 'अच्छी लड़की' को कैसे व्यवहार करना चाहिए, कैसे लड़कों को ताकतवर और निडर बनना चाहिए, बेटियों के कपड़ों और आने-जाने पर नियंत्रण रखती है और बेटे को कहीं भी आने जाने की आज़ादी देती है, या बेटी की तुलना में बेटे को अच्छा, अधिक पौष्टिक खाना और स्वास्थ्य देखभाल देती है। ये सभी व्यवहार ही सामाजिक मान्यताओं की अदृश्य सत्ता दर्शाते हैं। यही अदृश्य सत्ता तब भी नज़र आती हैं जब हम देखते हैं कि जिन महिलाओं नें अपने परिवारों में पुरुषों के विशेषाधिकारों और सत्ता को बरकरार और सुरक्षित रखा है, उनका, परिवार में प्रभाव अधिक होता है और घर पर लिए जाने वाले फैसलों में अधिक सुनी जाती है और उन्हें इसके लिए किसी औपचारिक अधिकार की भी ज़रूरत नहीं होती। हम परिवारों में इस तरह की अदृश्य और अप्रत्यक्ष शक्ति के उदाहरण टेलिविजन पर दिखाये जाने वाले किसी भी प्रचलित टीवी धारावाहिक में देख सकते हैं।

सत्ता का अदृश्य रूप **कई तरह से सत्ता के सभी स्वरूपों में से सबसे अधिक जटिल और मुश्किल होता है – और इसका एकमात्र कारण यही है कि सत्ता के इस रूप को देखा नहीं जा सकता – जब तक की हम यह जान नहीं लेते कि इसे कैसे और कहाँ तलाशा जाये!**

यही कारण है कि प्राय: सत्ता के इसी रूप को चुनौती दे पाना सब से कठिन होता है। सत्ता का अदृश्य स्वरूप वह शक्ति है जिससे लोगों के खुद अपने बारे में सोचने और विचार करने के (अपनी खुद की छवि, अपने आत्म-सम्मान) तरीके को प्रभावित कर बदला जा सकता है। यही वह क्षमता है जिससे लोगों के नज़रिये और पूर्वाग्रह बनते हैं या हमारी इच्छाएँ और जरूरतें बनती और पूरी होती हैं।

अदृश्य सत्ता का संभवत: सबसे अधिक प्रभावी और व्यापक रूप शायद **विचारधारा** ही है – क्योंकि विचारधारा का अर्थ हमारे विचार, सिद्धान्त और मान्यताएँ हैं जोकि किसी बात को सही या गलत, 'सामान्य या असामान्य', प्राकृतिकया अप्राकृतिक, मानने का आधार बनती हैं। विचारधारा की अदृश्य सत्ता के माध्यम से ही हमें किसी बात को स्वीकार करना, किसी गतिविधि में सहभागी बनना, समर्थन करना, किसी अनुचित सामाजिक व्यवस्था को स्थायी बनाने में योगदान देना, या फिर खुद सत्ताहीन हो जाना सिखाया जाता है। समाज में पुरुषों का श्रेष्ठ होने की विचारधारा (या *पितृसत्ता की विचारधारा*) इसका एक अच्छा उदाहरण है। यह ढांचा और इसके पीछे की विचारधारा आज तक इसलिए नहीं सुरक्षित रही है क्योंकि पुरुष इसको जबरन लागू करवाते रहे हैं, बल्कि इसलिए क्योंकि महिलाओं को उनके बचपन से ही यह सिखाया जाता है कि पुरुषों के श्रेष्ठ होने को स्वीकार किया जाये और इसे *चुनौती* न दी जाये – फिर भले ही महिलाओं को पितृसत्ता के कारण होने वाले भेदभाव और असमानता का सबसे अधिक सामना करना पड़े। सच तो यह है कि महिलाएं ही पितृसत्ता की सबसे वफादार सिपाही बन जाती है और इसे इतनी मज़बूती से सुरक्षित रखने में लग जाती हैं कि पुरुषों को इसके लिए कुछ नहीं करना पड़ता। वंश (काले रंग के लोगों की तुलना में गोरे लोग श्रेष्ठ होते हैं), विषमलैंगिकता (विपरीत लिंग के प्रति यौन आकर्षण ही 'सामान्य' या 'प्राकृतिक' होता है) और जाति प्रथा (कुछ जातियाँ दूसरी जातियों के मुक़ाबले श्रेष्ठ होती हैं) के पीछे प्रचलित विचारधारा भी सत्ता के अदृश्य रूप के कुछ बेहतर उदाहरण हैं क्योंकि इनसे ही लोगों के भाव, दृष्टिकोण और पूर्वाग्रह निर्मित होते हैं। **यह अलग बात है कि प्राय: हमें विचारधारा कुछ करती दिखाई नहीं पड़ती – और यही इसकी अदृश्य शक्ति है!**

मीडिया, मार्केटिंग और विज्ञापन उद्योग भी अदृश्य सत्ता के अच्छे उदाहरण हैं। समाचार मीडिया हमेशा अपनी इच्छा के विषयों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करने के लिए या किसी विषय को हमारी नज़र से दूर रखने के लिए अपनी अदृश्य सत्ता का प्रयोग करता रहता है। मीडिया ही हमें बताता है कि उस दिन की सबसे महत्वपूर्ण खबर क्या रही। मीडिया जो नहीं दिखाता, वह भी महत्वपूर्ण होता है। किसी घटना विशेष को न दिखा कर मीडिया दूसरी घटनाओं को अधिक महत्वपूर्ण बना देता है और इस तरह से वे हमारी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक प्राथमिकताओं को लगातार प्रभावित करता रहता है और हमें इसका आभास तक नहीं हो पाता। विज्ञापन उद्योग भी कुछ इसी तरह से काम करता है। विज्ञापन करने के लिए बहुरंगी चित्रों और लुभावने संगीत और धुनों से बिना हमें एहसास हुए हमारी इच्छाएँ बनती है और हम यह सोचने लगते हैं कि हमारे लिए कौन सा उत्पाद बेहतर है जो हमें अधिक सुंदर बना सकता है या हमारी छवि को बिगाड़ सकता है। हमें पता चले बिना ही हर रोज़ हमारी सोच को इस तरह प्रभावित किया जाता है कि हम पतले होना चाहते हैं, गोरा रंग पाना चाहते हैं, विज्ञापन में दिखाई गयी या दिखाये गए मॉडल की तरह दिखना चाहते हैं, उसके पहने कपड़ों जैसे कपड़े पहनना चाहते हैं, वैसे ही जूते खरीदना चाहते हैं, वही क्रीम, फोन या वस्तु अपने लिए पाना चाहते हैं। टेलिविजन पर दिखाये जाने वाले धारवाहिक भी इसी तरह काम करते हैं – वे हमारे सोचने के तरीके को प्रभावित करते हैं कि क्या सही है, या हमारे नैतिक मूल्य, हमारी भाषा, पहनावा या व्यवहार कैसा हो और यह सब होते हुए हमें इसकी ज़रा भी खबर नहीं लगती। और यही सत्ता का अदृश्य स्वरूप है!

सत्ता के विभिन्न स्वरूपों को जानना और समझना आखिर क्यों महत्वपूर्ण होता है? इसका कारण यह है की सामाजिक बदलाव या महिला अधिकारों के क्षेत्र में काम करते हुए हम अक्सर प्रयत्क्ष सत्ता पर अधिक ध्यान देते हैं – जैसे किसी कानून को बदलने की कोशिश करना, महिलाओं को राजनीतिक पद पर पहुंचाना, हिंसा करने वाले किसी व्यक्ति को सज़ा दिलवाना। लेकिन अपने काम में हम उन अदृश्य या दिखाई न पड़ने वाली सत्ता की ओर ध्यान नहीं देते जो उस परिस्थिति में कार्यशील होती है और जिनका हमारे काम पर अधिक प्रभाव भी हो रहा होता है। अगर हम सत्ता व्यवस्था में कोई निश्चित और स्थायी बदलाव लाना चाहते हों या फिर सत्ता व्यवस्थाओं को पूरी तरह खत्म करने के इच्छुक हों, तो ऐसा हम तभी कर सकते हैं जब हम इस सत्ता व्यवस्था को बनाए रखने, इसे सुरक्षित रखने में सहायक अदृश्य और अप्रत्यक्ष ताकतों को उजागर कर उनका खात्मा कर सकें।

५

सत्ता कैसे व्यक्त की जाती है?

हमें लगता है कि बाहर समाज में सत्ता को बदले जाने की ज़रूरत है, अपने खुद के अंदर नहीं।

सत्ता प्रयोग करने के पाँच रूप

स

सत्ता दूसरों पर
सत्ता कार्य सिद्धि के लिए
सत्ता अपने भीतर
सत्ता सहयोग से
सत्ता पीड़ित की

सत्ता दूसरों पर होना, सत्ता के इस रूप से हम सब परिचित हैं और इसे आसानी से पहचानते हैं। इस सत्ता का प्रभाव आमतौर पर असरदार लोगों या संस्थाओं द्वारा, उन्हे मिले किसी अधिकार के प्रयोग से किया जाता है – जैसे कि पिता, माता, धर्म प्रमुख अथवा राजनेता। इस का संबंध निर्णय लेने के अधिकार से है। प्रभावी व्यक्ति प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से दूसरों पर नियंत्रण रख पाता है, उन्हे मिलने वाले अवसरों, विकल्पों और उनके द्वारा किए जाने वाले कामों का निर्णय लेता है। दूसरों पर अपना प्रभाव रखना ही इस सत्ता का दूसरा नाम है। उदाहरण के लिए म्बुतो नें निर्णय लिया कि वह अपने बेटे को तो हाई स्कूल भेजेगा लेकिन बेटी को नहीं क्योंकि वह केवल एक बच्चे की पढ़ाई का खर्च उठा सकता था; पुजारी नें अपने भक्तों को निर्देश किया कि फसल कटाई का उत्सव न मनाया जाये क्योंकि उनकी पवित्र पुस्तक में इसका उल्लेख नहीं है; जाना नें अपनी बेटी से कहा कि वह अपनी सहेलियों के साथ खेलने न जाकर घर में कपड़े धोये; अमरीका के राष्ट्रपति नें इराक पर हमला करने का निर्णय लिया; एक अन्य राष्ट्रपति नें निर्णय लिया कि कुछ विशेष देशों के नागरिकों को अमरीका में प्रवेश करने की अनुमति न दी जाये आदि।

आप दूसरों पर सत्ता के अपने अनुभव यहाँ दर्ज करें

कार्य सिद्धी के लिए सत्ता का प्रयोग उसे कहते हैं जब हम किसी व्यक्तिगत, सामूहिक अथवा राजनीतिक लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अपने अथवा दूसरों के लाभ के लिए कुछ प्रयास करते हैं तो यह कार्य सिद्ध करने की सत्ता का प्रयोग है। यह बिना किसी की अनुमति या सहयोग के, किसी काम को खुद कर पाने के शक्ति है जिसे एजेंसी अथवा क्षमता भी कहा जाता है। उदाहरण के लिए: मज़दूरी करने वाली भूमिहीन दलित नागममा नें फैसला किया कि आगे से वह अपने भूस्वामी के सामने नतमस्तक नहीं होगी – शायद दूसरी दलित महिलाएं भी ऐसा ही करेंगी; निसीफो नें हाई स्कूल के सामने दुकान लगा कर आइस-क्रीम और छोटी वस्तुएँ बेचने का निर्णय लिया ताकि वह कॉलेज के लिया पैसा कमा सके।

आप कार्य सिद्धी के लिए सत्ता के अपने अनुभव यहाँ दर्ज करें

अपने भीतर की शक्ति व्यक्त करने के इस रूप पर लेख के आरंभ में ही चर्चा की जा चुकी है। यहाँ यह नोट करना भी लाभप्रद है कि स्वयं की शक्ति को अमूर्त संसाधन भी माना जा सकता है। ज्ञान, जानकारी तक पहुँच, संपर्क, सामाजिक नेटवर्क, ये सब हमारी अंदरूनी, स्वयं की शक्ति को पुष्ट करने में सहायक हो सकते हैं।

यहाँ अपने भीतर की शक्ति की जानकारी होने या उसके प्रयोग के अनुभव को दर्ज करें

सहभागी सत्ता या सत्ता सहयोग से का तात्पर्य समूह की सत्ता से है – इसका अर्थ उस सामूहिक शक्ति के प्रयोग से है जब आप अन्याय का सामना करने और इसे चुनौती देने के लिए अपने ही जैसे दूसरे ऐसे लोगों को ढूंढ कर उनका साथ देते हैं जो खुद ऐसे ही अन्याय का सामना कर रहे हों या उस के प्रति चुनौती देने का समान भाव रखते हों। सहभागी सत्ता दरअसल सत्ता प्रदर्शन का सबसे प्रभावी रूप है और इसके प्रयोग से दुनिया में कई बड़े अन्याय – जैसे कि गुलामी प्रथा - सफलतापूर्वक समाप्त हो पाए हैं और अनेक निरंकुश और तानाशाही राज सत्ताएँ समाप्त हुई हैं। उदाहरण के लिए: सैंकड़ों हजारों आम नागरिकों के विद्रोह के कारण मिस्र, नेपाल, ब्राज़ील और दूसरे कई देशों में अलोकप्रिय नेताओं और सरकारों का पतन हुआ; मणिपुर में बड़ी उम्र की कुछ महिलाओं नें अपने कपड़े उतार निर्वस्त्र होकर सुरक्षा बलों के सामने मूक प्रदर्शन करने का निर्णय लिया क्योंकि कुछ सिपाहियों नें उनके समुदाय की एक महिला का बलात्कार किया था और उसके शरीर को क्षत-विक्षित कर दिया था; इसी तरह जब होन्डुरस में पर्यावरण के बचाव के लिए काम करने वाली बर्टा करकेरस की हत्या होन्डुरस में खनन कार्यों का विरोध करने के कारण कर दी गयी तब महिला संगठनों नें गाँव से लेकर संयुक्त राष्ट्र तक विरोध मार्च आयोजित किए – परिणामस्वरूप खनन के काम में लगी कंपनी को वह जगह छोडकर जाने के लिए विवश होना पड़ा था; इसी तरह महिलाओं के साथ होने वाली हिंसा के प्रति लोगों में जानकारी फैलाने के उद्देश्य से हर वर्ष फरवरी महीने में लाखों महिलाएं 'वन बिल्यन राईसिंग' में भाग लेती हैं और नृत्य करती हुई मार्च करती हैं।

यहाँ यह याद रखना भी बहुत महत्वपूर्ण है कि सामूहिक सत्ता का प्रयोग लोगों का दमन करने के लिए भी किया जाता रहा है – सत्ता के इस स्वरूप को हम उस समय कार्यशील होते हुए देखते हैं जब निजी कंपनियाँ और राजनेता आपसी मिलीभगत से इन निजी कंपनियों के मुनाफे को बढ़ाने के लिए और अपनी जेबें भरने के लिए सरकारी नीतियों को बदल देते हैं। यह सहयोगी सत्ता का दूसरा रूप है जिसे 'सबके लिए न्याय या समानता' से कुछ लेना-देना नहीं होता।

सहभागी सत्ता के उदाहरण जिनके बारे में आपको जानकारी हो या आप खुद जिसका भाग रहें हों, के बारे में यहाँ बताएं

पीड़ित की सत्ता को व्यक्त करने का बहुत ही जटिल किन्तु बार-बार प्रयोग में लाया जाने वाला तरीका है, ख़ासकर महिलाओं और महिला संगठनों द्वारा नारीवादी आंदोलनों में इसका बार-बार प्रयोग दिखाई पड़ता है। पीड़ित की सत्ता से हम यह समझ सकते हैं कि भेदभाव, उत्पीड़न, दमन और चोट सहने वाले लोग सत्ता मिलने पर खुद क्यों इतने ज़्यादा निरंकुश, दमनकारी, उत्पीड़क बन जाते हैं, ख़ासकर जब उनके पास दूसरों पर नियंत्रण रख पाने की सत्ता आ जाती है।

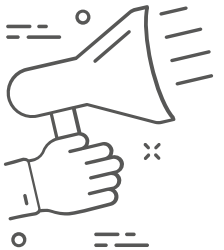

पीड़ित की सत्ता क्या है?

स्टीवन वाइनमेन नाम के एक मनोविशेषज्ञ नें युद्ध, विस्थापन, उत्पीड़न और हिंसा सह चुके लोगों के बीच काम करने के बाद 'पीड़ित की सत्ता' के सिद्धान्त को प्रतिपादित किया। उनका कहना है कि पीड़ित व्यक्ति में अपने सत्ताहीन होने के कारण एक तरह का गुस्सा और असहायपन, एक शक्तिहीन आक्रोश होता है। उत्पीड़न या शोषण की स्थिति से बच निकलने के बाद भी उसके मन से उन परिस्थितियों के प्रति वह क्षोभ, कड़वाहट और असहायपन खत्म नहीं होता जिनके कारण वह दमन और शोषण झेलने की स्थिति में पहुंचा होता है। अपने साथ हुए उत्पीड़न से बच निकलने के बाद और सत्ता पा लेने के बाद भी मन-ही-मन में हिंसा और चोट के शिकार लोग यह स्वीकार नहीं कर पाते कि अब वे पीड़ित नहीं रहे (उदाहरण के लिए जब ऐसे लोग किसी संस्था या परिवार के मुखिया बन जाते हैं तब भी)। उन्हें हमेशा यही लगता रहता है कि उनके साथ फिर से कहीं वही उत्पीड़न और शोषण दोबारा शुरू न हो जाये। ऐसे में उनका यही विश्वास रहता है कि दूसरों के प्रति अधिक प्रभावी बने रहकर या औरों का उत्पीड़न कर ही वे फिर से पीड़ित होने से बचे रह सकते हैं। वे अपना व्यवहार पहले की तरह बिलकुल वैसा ही बनाए रखते जिसके कारण वे उत्पीड़न से मुक्त हो पाये थे और इसके लिए वे भीतरघात करने, विनाशक कार्य करने, चाटुकारिता करने या दूसरों की बुराई करने से भी नहीं चूकते। जो लोग खुद के पीड़ित होने के खराब अनुभवों को भुला नहीं पाते, वे प्राय: मिली हुई सत्ता को सकारात्मक रूप से प्रयोग करने या दूसरों को नीचा न दिखाने या दूसरों पर सत्ता इस्तेमाल न करने जैसे स्वस्थ व्यवहार अपनाने में असमर्थ रहते हैं। **उन्हे सत्ता के प्रयोग के केवल दो ही तरीके समझ आते हैं, दूसरों पर नियंत्रण की सत्ता और पीड़ित की सत्ता।**

सामाजिक बदलाव के संदर्भ में, पीड़ित की सत्ता का प्रयोग होना और भी गंभीर इसलिए हो जाता है क्योंकि इस सत्ता के कुचक्र में फंसे लोग खुद अपने द्वारा झेले गए अन्याय का सामना करने और उसे दूर करने के लिए संगठन खड़े करने में भी लगे होते हैं। अपने असहाय होने के विचार के कारण उपजे शक्तिहीन आक्रोश को दूर करने की बजाए, वे अंजाने में ही पीड़ित की सत्ता प्रयोग में लाते रहते हैं। चूंकि अधिकतर महिलाओं नें अपने जीवन में अनेक कठिनाईयों का सामना किया होता है, और बहुतों का तो अत्यधिक हिंसा और उत्पीड़न से भी वास्ता रहा होता है, इसलिए इसमें कोई हैरानी की बात नहीं कि महिलाओं द्वारा सत्ता के प्रयोग में पीड़ित की सत्ता के सिद्धान्त का अनुपालन अधिक दिखता है। ऐसे में जब महिलाएं जेंडर आधारित भेदभाव और दमन के विरोध में संगठन खड़े करती हैं, तो उनके काम में पीड़ित की सत्ता के प्रयोग के अनेक व्यवहार देखने को मिलते हैं और वे सत्ता के प्रयोग के अपने तरीके से खुद अपने ही मिशन के उद्देश्यों को ध्वस्त करती और उनका उल्लंघन करती दिखती हैं।

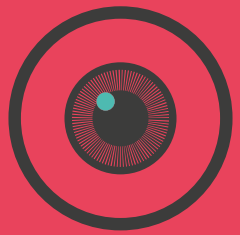

शक्तिविहीन आक्रोश होने पर उपजा गहरा अनभरा घाव

ज़ांज़िबार का अनुभव

पीड़ित की सत्ता की विंध्वंसक क्षमता का बेहतरीन उदाहरण 'ज़ांज़िबार का अनुभव' है। अफ्रीका के पुराने नारीवादी इसके बारे में बताते हैं कि यह एक सकारात्मक उद्देश्य को पूरा करने के लिए बुलाई गयी बैठक की घटना है जो बहुत ही जल्दी सभी के लिए पीड़ादायी अनुभव बन गयी जिसमें सभी नें दुख, दर्द, गुस्से, जलन महसूस की या एक दूसरे को भला-बुरा कहा। वर्ष 2003 में, अफ्रीकी नारीवादी कॉंग्रेस के आयोजन की तैयारी करने के उद्देश्य से, नारीवादी महिलाओं का एक समूह ज़ांज़िबार में बैठक के लिए एकत्रित हुआ। 35 नारीवादियों की यह बैठक सोमवार के दिन हुई और बहुत ही जल्दी उन सभी को लगने लगा कि उन्होने दूसरी महिलाओं की निजी और संस्थागत राजनीति और एजेंडा के बारे में जो विचार सोचे थे, वे सही नहीं बैठ रहे थे। दूसरे शब्दों में समूह में सभी शक्तिहीन आक्रोश से जूझ रहे थे। बृहस्पतिवार तक एक दूसरे की बुराई करना, एक दूसरे के प्रति कड़वाहट, आँसू, और अव्यवस्था हावी हो गए। अंत में नतीजा यह हुआ कि अपेक्षित कॉंग्रेस का आयोजन ही नहीं हो सका और सभी प्रतिभागियों को इस कड़वी सच्चाई का बोध हो गया कि सिद्धान्त और व्यावहारिकता हमेशा साथ-साथ नहीं चलते।

इस पूरे प्रकरण का सकारात्मक परिणाम यह हुआ कि इस ज़ांज़िबार में हुए अनुभव के फलस्वरूप अफ्रीकी नारीवादी नेतृत्व नें यह जान लिया कि प्रभावी नारीवादी नेतृत्व तैयार करने के लिए पहला कदम यह है कि उन्हें स्वीकार करना होगा कि इस आंदोलन में शामिल होने के उनके अनुभव और कारण अलग-अलग हैं। इसीलिए

यह ज़रूरी है कि वे पहले आपस में एक मौलिक समझ व नियम तैयार कर लें कि उन्हे अपनी-अपनी विंध्वंसक प्रवित्तियों को कैसे नियंत्रण में रखना है और आपस में कैसे व्यवहार करना है। इसके उपरांत ही नारीवादी आंदोलन में पहली बार अफ्रीकी नारीवादी चार्टर नाम से आचार-संहिता बनी जो नारीवादी आंदोलन को ज़ांज़िबार में हुई इस असफल बैठक का सफल और सशक्त उपहार साबित हुई।

सामाजिक न्याय या जेंडर समानता के ऐक्टिविस्ट के रूप में हमारी एक समस्या यह है कि हम सोचते हैं कि सत्ता व्यवस्था को हमारे अपने भीतर नहीं, बल्कि बाहर कहीं, लोगों और समाज में बदलने की ज़रूरत है। हम कभी भी खुद अपने द्वारा सत्ता के प्रयोग अथवा दरूप्योग के बारे में विचार नहीं करते। अपने बारे में हमारा विचार हमेशा यही होता है कि हम तो संत हैं, जो सत्ता के दरूप्योग के बारे में सोच भी नहीं सकता या सकती। लेकिन सत्य यही है कि दुनिया में बदलाव लाने के लिए, सबसे पहले हमें खुद अपने में बदलाव लाना होगा – हमें महात्मा गांधी की सीख को याद रखना होगा कि 'खुद वह बदलाव बनो जो तुम दुनिया में लाना चाहते हो'। हम दूसरों से कैसे अलग तरीके से सोचने और काम करने की अपेक्षा कर सकते हैं जब हम खुद ही ऐसा करने के लिया तैयार न हों। हम दूसरों से उनके दृष्टिकोण, मानक और व्यवहार बदलने के लिए कैसे कह सकते हैं जब हम अपने ही दृष्टिकोण को बदलने के लिए तैयार न हों। सत्ता व्यवस्था के प्रति और उसके साथ खुद अपने व्यवहार का विश्लेषण करने पर ही "हम वह (व्यक्ति) बनने की शक्ति पा सकते हैं जो हम अभी नहीं है"।[3] इसका तात्पर्य है कि हम ऐसे लोग बन सकते हैं जो उचित और न्यायपूर्ण जीवन जी सकें।

[3] सौजन्य से https://sojo.net/articles/subverting-democracy-not-partisan-it-immoral में रेव विलियम जे बार्बर II व जोनाथन विल्सन-हार्टग्रोव के कथन की एक पंक्ति, "लोकतन्त्र को नष्ट करने की कोशिश पक्षपातपूर्ण ही नहीं, अनैतिक है" में कथित कथन से उद्धृत

तो आइये, हम इस अवसर का लाभ उठाएँ और सत्ता और इसके उपयोग के तरीकों के प्रति अपने दृष्टिकोण, अपने विचारों को जानने की कोशिश करें। नीचे बताया गया अभ्यास इसके लिए उपयोगी होगा:

○ सत्ता के प्रयोग के अपने सबसे पहले अनुभवों के बारे में सोचे और विचार करें कि कैसे इन अनुभवों के कारण सत्ता के प्रति आपका आज का दृष्टिकोण प्रभावित हुआ होगा।

○ सत्ता प्रयोग के अपने खुद के तरीके का विश्लेषण करने की कोशिश करें और यह सोचें कि आपको किस तरह के बदलाव करने की ज़रूरत है।

अपने इस विश्लेषण के बाद प्राप्त नतीजों को किसी के साथ साझा करने की ज़रूरत नहीं है – लेकिन इनसे आपको खुद अपने भीतर लाये जाये वाले परिवर्तन की प्रक्रिया को शुरू कर पाने में अवश्य मदद मिलेगी।

सत्ता और इसके प्रयोग के मेरे निजी अनुभव / मैं खुद किस तरह सत्ता को समझती / समझता हूँ

पहला कदम अतीत के बारे में सोचें!

○ याद करने की कोशिश करें जब पहली बार आपको **लोगों के बीच सत्ता के होने** का एहसास हुआ था – जब आपने अनुभव किया कि कुछ लोग दूसरों की अपेक्षा अधिक प्रभाव या सत्ता रखते हैं। हो सकता है आपके साथ यह अनुभव घर पर, स्कूल में, खेल के मैदान में या कहीं और हुआ हो। यह संभव है कि अपने इस अनुभव में आपने **दूसरों पर प्रभाव (प्रत्यक्ष सत्ता)**, या **परोक्ष सत्ता** या **अदृश्य सत्ता** (एजेंडा निर्धारित करने की क्षमता) को देखा और महसूस किया हो। याद करें कि उस अनुभव के दौरान किस विशेष घटना से आपको लगा था कि कोई **सत्ता व्यवस्था** काम कर रही थी।

○ अब उस समय को याद करनें की कोशिश करें जब पहली बार आपको **अपनी खुद की सत्ता** का एहसास हुए था – क्या आपकी यह सत्ता दूसरों पर प्रभाव की थी, अदृश्य सत्ता थी या फिर किसी पीड़ित की सत्ता की तरह थी? याद करें कि उस अनुभव के दौरान किस विशेष घटना से आपको अपनी सत्ता का एहसास हुआ था।

दूसरा कदम

- पीछे मुड़ कर अपने जीवन में देखें और विचार करें कि सामाजिक सत्ता व्यवस्था में इनमें से आप किस स्थिति में रहे हैं? (आप लागू हुई प्रत्येक स्थिति को चुन सकते है)। आपने क्या पाया है कि अधिकांश समय आप किस स्थिति में होते हैं?
  - **अधीनता** या नियंत्रण के पात्र (किसी अन्य नें आप पर अपने प्रभाव या अधिकार का प्रयोग किया): आपको कैसा महसूस हुआ?
  - **बराबरी**: दूसरों के साथ मिलकर काम करते हुए, आप समान अधिकार जताते हैं या नियंत्रण रखते हैं – आपको कैसा महसूस हुआ?
  - **नियंत्रण**: आप (अकेले अथवा दूसरों के साथ मिल कर) जब दूसरों पर अपना प्रभाव दिखाते हैं – तब आपको कैसा महसूस हुआ?
  - **अन्य**: ऊपर बताई गयी स्थितियों से अलग कोई स्थिति, अगर कोई हो; यहाँ यह ज़रूर स्पष्ट करें इस स्थिति में दूसरों की तुलना में आपका क्या स्थान था, और आपको कैसा महसूस हुआ?

- सत्ता की इन स्थितियों में से आप खुद को किस स्थिति में **सबसे अधिक सहज पाते** हैं? वह कौन सी स्थिति है जिसमे आप जानते हैं की आपसे क्या अपेक्षा की जा रही है, आपको क्या करना है और कैसे इस स्थिति को सही रूप से संभालना है?

तीसरा कदम

- आपके विचार से, **दूसरों की सत्ता पर आपके प्रतिक्रिया करने के तरीके** को आपके पूर्व के अनुभवों नें कितना प्रभावित किया है – उदाहरण के लिए, वे लोग जो आपके संगठन में या आपके जीवन में प्रभावी स्थिति में हैं?

- आप अपने निजी जीवन में या अपने संगठन में **अपनी सत्ता का प्रयोग जिस तरह से करते हैं,** आपको क्या लगता है कि आपके पूर्व के अनुभवों नें आपके ऐसे व्यवहार को किस तरह प्रभावित किया है?

- खुद से प्रश्न करें: **क्या मुझमें शक्तिहीन आक्रोश है?** क्या मैं पीड़ित की सत्ता का प्रयोग करती हूँ? (दूसरों को नीचा दिखाना, हमेशा यह सोचना कि अगर मैंने अपना प्रभाव नहीं दिखाया तो दूसरा मुझ पर प्रभावी हो जाएगा, हमेशा क्रोध में रहना या यह चिंता करना कि कहीं कोई दूसरा मुझ पर अधिक हावी न हो जाये)

- अगर आपको लगता है कि आपको अपनी सत्ता को प्रयोग में लाने के तरीके को बदलना चाहिए, तो आप अपनी मदद के लिए किस तरह के सहयोग, मार्गदर्शन या प्रक्रिया की आशा रखते हैं?

६

सत्ता कैसे कार्य करती है?

प्राइमर के इस अंतिम भाग में, अभी तक सीखी, समझी और जानी, सभी अवधारणाओं और सिद्धांतों को हम एक साथ लाकर एक संयुक्त ढांचे के रूप में बनाएँगे जिससे कि हमें यह जानने में सहायता मिलेगी कि सत्ता व्यवस्थाएँ कैसे बनती हैं, वे कैसे काम करती हैं और कैसे बनी रहती हैं।

सत्ता व्यवस्था की शुरुआत कैसे होती है?

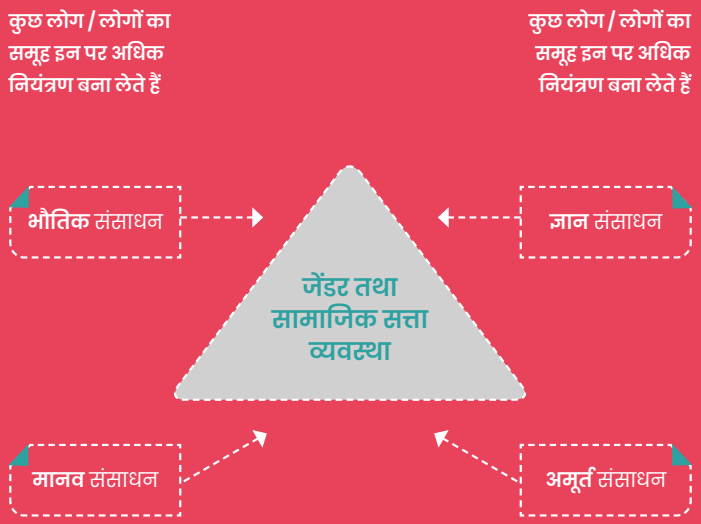

कुछ चित्रों से हम देखेंगे कि सत्ता व्यवस्था किस तरह निर्मित होती हैं, और वे कौन सी प्रणालियाँ या प्रक्रियाएँ हैं जिनके कारण ये सत्ता व्यवस्थाएँ, अनुचित और असमान होते हुए भी, स्थिर और संस्थापित रहती हैं। जो लोग सत्ता व्यवस्था से खुद शोषित हैं या भेदभाव सहते हैं वे लोग क्यों इस सत्ता व्यवस्था के काम करने में न केवल भागीदार रहते हैं बल्कि कभी-कभी तो खुद इसका समर्थन भी करते दिखते हैं।

इन सत्ता प्रक्रिया या व्यवस्था की शुरुआत कैसे होती है ? जैसा कि हमने पहले देखा है, समाज में कुछ लोगों या समूहों द्वारा अलग-अलग तरह के संसाधनो, विशेषकर भौतिक संसाधनो (भूमि, धन) और ज्ञान संसाधनों तक बेहतर पहुँच या अधिक नियंत्रण होने के से सत्ता की यह व्यवस्था आरंभ होती है। फिर इसका प्रयोग मानव संसाधनों पर नियंत्रण बनाने के लिए किया जाता है – जैसे लोगों का श्रम, क्योंकि जिन लोगों के पास अपनी ज़मीन या पैसा नहीं होता उन्हे दूसरे लोगों के लिए काम करना पड़ता है। जेंडर पर आधारित सत्ता व्यवस्था (या पितृसत्ता) में सबसे नीचे के स्तर पर मौजूद पुरुष उसी स्तर की महिलाओं की तुलना में अधिक सत्ता में होते हैं क्योंकि इन महिलाओं के शरीर, उनकी यौनिकता प्रजनन क्षमता और श्रम पर इनका नियंत्रण रहता है। तो इस तरह से न केवल भूमि अधिपति और धनवान पुरुष ही, बल्कि भूमिहीन और निर्धन पुरुष भी कम से कम एक तरह के मानव संसाधन, अर्थात महिला के शरीर और उसके श्रम पर नियंत्रण रख पाने में सफल रहते हैं।

समय के साथ-साथ, अधिक संपत्ति, ज्ञान और मानव संसाधनों पर नियंत्रण रखने वाले लोगों के समूह अथवा गुट बन जाते हैं और फिर सामूहिक रूप से अमूर्त संसाधनो पर भी इनका नियंत्रण होता चला जाता है। इसी तरह सत्ता व्यवस्था में नीचे के स्तर पर स्थित लोग भी अमूर्त संसाधनों की रचना करते रहते हैं, ताकि कठिन समय में ये उनके काम आयें। ताकि जीवन को कुछ सरल बनाया जा सके क्योंकि जीवन को सरल करने के दूसरे बहुत कम साधन इनके पास उपलब्ध होते हैं। ऊपर दिये गए चित्र में दिखाया गया है कि सत्ता की उत्पत्ति के समय पर यह व्यवस्था कैसी दिखती है।

सत्ता व्यवस्थाएँ किस तरह बनी रह पाती हैं?

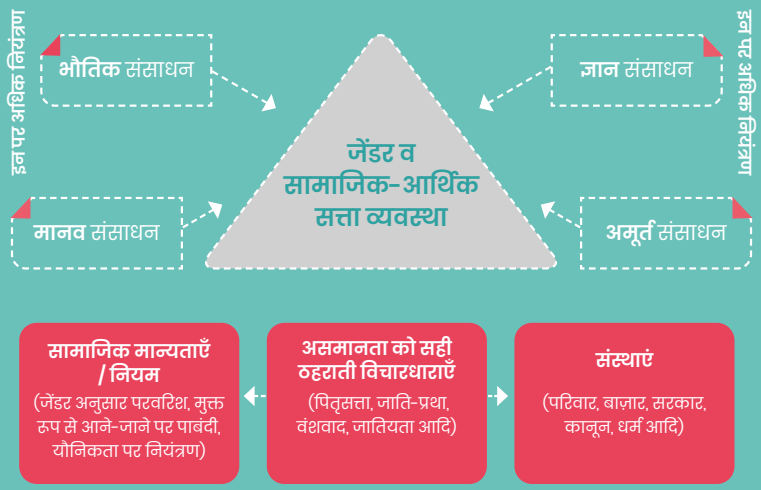

सत्ता की यह असमान व्यवस्था किस तरह से बनी रहती है

कोई भी सत्ता व्यवस्था जिसमें शीर्ष पर केवल कुछ ही प्रभावी लोगों का वर्चस्व हो, के लंबे समय तक बने रहने की आशा नहीं की जा सकती अगर इस व्यवस्था में शामिल नीचे के स्तर के उपेक्षित किन्तु बहुसंख्यक लोग इनका विरोध करें। ज़्यादा संख्या में ये उपेक्षित लोग मिल कर इस सत्ता व्यवस्था को पलट सकते हैं।

ऐसी स्थिति में कैसे इस सत्ता व्यवस्था का कायम रहना सुनिश्चित किया जाये? यह कैसे संभव हो कि व्यवस्था में सबसे नीचे के स्तर पर असंख्य लोग भी इस व्यवस्था का समर्थन करें, या कम से कम इसे स्वीकार कर लें? ऐसे में इस सत्ता व्यवस्था द्वारा लोगों पर, ज्ञान और भौतिक संसाधनों पर अपने इस असमान नियंत्रण को बनाए रखना – एक प्राथमिकता बन जाती है – खासकर यह देखना कि संसाधनहीन जनता को उनके सही स्थान पर रखा जाये और यह देखा जाये कि वे किसी तरह की चुनौती न खड़ी करें या व्यवस्था के लिए खतरा न उत्पन्न करें। आमतौर पर इसके लिए बहुत ही दक्ष और प्रभावी प्रक्रियाएँ लागू की जाती हैं ताकि यह व्यवस्था न केवल सुरक्षित रहती है बल्कि स्थायी भी बनी रहती है। आइये देखें कि ये प्रक्रियाएँ क्या हैं।

विचारधारा

इसके लिए पहली और सबसे महत्वपूर्ण प्रक्रिया है ***विचारधारा*** - या कोई सिद्धान्त अथवा विचारों की ऐसी शृंखला तैयार करना जो इस सत्ता व्यवस्था को उचित ठहराती रहे, भले ही सत्ता की यह व्यवस्था कितनी भी अनुचित और असमान क्यों न हो। शताब्दियों से हमनें देखा है कि अनेक ऐसी ही विचारधाराएँ इन अनुचित और असमान सत्ता व्यवस्थाओं को सही ठहराती रही हैं।

- **पितृसत्ता**, ऐसी ही एक विचारधारा है जो बताती है कि पुरुष औरतों के मुक़ाबले श्रेष्ठ हैं, यह कि भगवान नें ही ऐसा निर्णय किया है (आदमी पहले आया था फिर औरत की उत्पत्ति हुई), प्रकृति का यही नियम है (महिलाओं की तुलना में पुरुष अधिक बलशाली होते हैं), शारीरिक भूमिका के भी यही नियम हैं (माँ संतान को जन्म देती है और पिता का काम उसका पालन-पोषण करना होता है) या फिर यह कि क्रम-विकास का भी यही नियम है; पितृसत्ता की विचारधारा में आपका यही कर्तव्य है कि आप अपनी जेंडर भूमिका का निर्वहन करें और न तो सम्पूर्ण व्यवस्था पर कोई प्रश्न उठाएँ और न ही इस व्यवस्था में होने वाले अन्याय पर कोई सवाल खड़ा करें।

- **वंश और रंग के आधार पर श्रेष्ठता** की विचारधारा जिसमें कहा गया कि श्वेत लोगों के पास प्रखर बुद्धि और अधिक क्षमता होती है इसलिए उन्हें अश्वेत लोगों पर हावी होने या प्रभुत्व रखने का अधिकार है; और यह कि अश्वेत लोगों के लिए यही बेहतर है कि वे श्वेत लोगों के प्रभुत्व को स्वीकार कर लें, क्योंकि उनका कल्याण भी इसी में है।

- **जाति की श्रेष्ठता** की विचारधारा जो यह कहती है कि इस जीवन में आप किस जाति में जन्में हैं, यह आपके पिछले जन्म के कर्मों कर परिणाम है, और यह भी कि अगले जन्म में आप ऊंची जाति में तभी जन्म लेंगे अगर आप पूरी निष्ठा से इस जन्म में अपनी जाति के अनुसार काम करते रहें और जाति से जुड़े सभी नियमों का पालन करते रहें।

इनमें से कुछ विचारों को ग्रन्थों में लिखा जा चुका है – ब्राह्मण विद्वान मनु नें दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व में अपने ग्रंथ, 'मनुस्मृति' या 'मानव धर्मशास्त्र' में जेंडर और जाति के नियमों को लिखा था। एडोल्फ हिटलर नें वंश श्रेष्ठता के अपने सिद्धान्त के बारे में अपनी पुस्तक, 'मैन्न काम्प्फ' में लिखा, जिसके कारण दूसरे विश्व युद्ध के दौरान (1939-1945) यहूदियों, खानाबदोशों और 'निचली' जाति के लोगों का भीषण नरसंहार हुआ। लेकिन हम किसी विचारधारा को पुस्तकों या औपचारिक शिक्षा से ग्रहण नहीं करते, बल्कि इसे हम उन नियमों और विचारों से प्राप्त करते हैं जिन्हे हम रोजाना अपने परिवारों और समुदायों में पालन होते देखते हैं। अपने यौन अंगों को देखकर हमें अपनी जेंडर पहचान का पता चलता है, अपने वर्ग, जाति या वंश पहचान की जानकारी अपने बड़ों, अपने अध्यापकों और दूसरों से मिलती है। हमें बचपन से ही कुछ विचार सिखाये जाते हैं, जब हम इसको चुनौती नहीं दे पाते, इसलिए बिना समझे ही हम उस विचारधारा को अपना लेते हैं।

सत्ता व्यवस्था को सुरक्षित बनाए रखने के लिए विचारधारा सबसे शक्तिशाली है, क्योंकि इसके माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति इस व्यवस्था को तोड़ने की बजाय इसमें भागीदार बनने के लिए तैयार हो जाता है – और समाज में अपनी स्थिति को स्वीकार कर लेता है। सबसे शोषित व्यक्ति – जैसे महिलाएं, दलित, अश्वेत लोग, ओर निर्धन लोग भी – इस व्यवस्था को सुरक्षित रखने में सहभागी बनते हैं। महिलाएं अपने बेटों और बेटियों को जेंडर का पाठ पढ़ाती हैं, वे इस व्यवस्था का उल्लंघन करने वाली महिलाओं को अनुशासित करती हैं। उन्हें ऐसा करने के लिए पुरूस्कृ त भी किया जाता है – परिवार में उनका दर्जा बढ़ जाता है और उनके विचार सुने जाने लगते हैं क्योंकि उन्होने स्वयं को पुरुषों के विशेषाधिकारों को सुरक्षित रखने वाली और दूसरी महिलाओं को सही स्थान पर रखने वाली 'अच्छी' महिला साबित कर दिया होता है। यह विचारधारा एक अचूक हथियार इसलिए है क्योंकि यह एक अदृश्य सत्ता है – अधिकतर स्थितियों में अन्याय को हम मुख्यत: इसी अचूक और प्रभावी वैचारिक मूढ़ता के कारण स्वीकार कर लेते हैं – जो हमारी विचारधारा को तैयार करने की ही प्रक्रिया होती है।

सामाजिक मान्यताओं और नियमों की उत्पत्ति

सत्ता-व्यवस्था को बनाये रखने में दूसरा सहायक स्तम्भ तब तैयार हो जाता है जब इसे सही ठहराने वाली विचारधाराएँ रोज़मर्रा के जीवन में ***सामाजिक मान्यताएँ और नियमों*** के रूप में ढाल दी जाती हैं। जेंडर संबंधी तो सैंकड़ों नियम हैं – महिलाओं का पहनावा कैसा होना चाहिए, उन्हे कैसे बात करनी चाहिए, कैसे चलना चाहिए, उन्हें कहाँ जाना चाहिए और कहाँ नहीं, वे किसके साथ मेलमिलाप रखें, किसके साथ नहीं, उनका व्यवहार कैसा हो, वे कौन सा काम करें, आदि। इन नियमों के द्वारा पितृसत्तात्मक विचारधारा के आधार पर समाज में महिलाओं का स्थान निर्धारित किया जाता है, उनके कर्तव्यों और दायित्वों को व्यवहार के नियमों, श्रम विभाजन, आने-जाने की स्वतन्त्रता, वेषभूषा आदि के नियमों में लाया जाता है। महिलाओं की 'शालीनता' पर सामाजिक नियमों का एक उदाहरण है - अनेक संस्कृतियों में, 'एक शालीन महिला' से अपेक्षा की जाती है कि वह एक खास तरह का पहनावा अपनाए, पुरुषों से दूर रहे (विशेषकर उन पुरुषों से जो उसके संबंधी न हों), अपने पति या बड़ों के सामने न बोले, और बिना कोई शिकायत किए उसे दिये गए कामों को पूरा करती रहे।

अब ये नियम वास्तव में उस पितृसत्तात्मक विचारधारा को लागू करने के माध्यम हैं जिसमें यह समझा जाता है कि महिलाओं को दब कर रहना चाहिए और पुरुषों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित नहीं करना चाहिए। लेकिन पितृसत्ता वाली शक्ति व्यवस्था और दूसरी सामाजिक सत्ता के अंतरसंबंधों के चलते महिलाओं के लिए ये सामाजिक नियम हर संस्कृति में एक समान नहीं होते। यही कारण है कि कामकाजी महिलाओं पर वही नियम लागू नहीं किए जाते जो मध्यमवर्गीय या धनी महिलाओं पर लागू होते हैं। इस तरह, निर्धन महिलाओं पर, जिन्हे अपने परिवार का पेट भरने के लिए काम करना ही होता है और जिनके श्रम का उपयोग दूसरे वर्ग के लिए किया जाता है(जैसे फसल की बुआई अथवा कटाई करना, दूसरे धनी लोगों के घर पर काम करना या सिले-सिलाए वस्त्र बनाने के कारखानों में काम करना), उनपर यहाँ वहाँ आने-जाने पर प्रतिबंध लगाए जाने के वही सामाजिक नियम नहीं लगाए जा सकते जो मध्यम वर्ग की महिलाओं पर लागू होते हैं।

महिलाओं के कहीं आने-जाने की स्वतन्त्रता को लेकर लागू होने वाले सामाजिक नियम, विभिन्न सत्ता व्यवस्थाओं, विचारधारों और नियमों के बीच के सम्बन्धों को समझने के लिए बहुत अच्छा परिप्रेक्ष्य या संदर्भ उपलब्ध कराते हैं। पितृसत्तात्मक शक्ति व्यवस्था के अंतर्गत महिलाओं के पहनावे और उनके खुले घूमने फिरने पर नियंत्रण रखकर उनके शरीर पर कुछ हद तक नियंत्रण बनाये रखने का प्रयास किया जाता है – महिलाओं से कहा जाता है कि वे कहीं अकेले, विशेषकर रात के समय, न जाएँ, या उनसे कहा जाता है कि वे सार्वजनिक स्थानों पर अकेली न जाएँ, या शरीर दिखाने वाले कपड़े न पहने। अगर वे ऐसा करती हैं तो समझ लिया जाता है कि उनके साथ बलात्कार या यौन छेड़-छाड़ की घटना हो सकती है- और अगर कहीं ऐसी कोई घटना महिला के साथ हो जाती है तो लोगों की सबसे पहली प्रतिक्रिया (1) उस महिला को ही दोषी ठहराने की होती है, क्योंकि उसे उस समय, अकेले उस जगह पर नहीं जाना चाहिए था या वैसे कपड़े नहीं पहनने चाहिए थे जो उसने पहने थे; (2) उसके परिवार के पुरुषों पर दोष दिया जाता है कि वे उस महिला पर 'नियंत्रण' रख पाने में असफल रहे हैं; और (3) उसकी माँ या घर की दूसरी महिलाओं को दोष दिया जाता है कि उन्होने उसे नियमों की 'जानकारी' नहीं दी और 'सही' आचरण करना नहीं सिखाया।

गतिविधि: किसी नियम या मान्यता पर विचार करें जो आपके जीवन में लागू होती हैं (जैसे "महिलाओं को ऐसा नहीं ..." या "लड़कों को ऐसा...") । क्या आप इस के पीछे की विचारधारा को भी पहचान सकते हैं, और इस मान्यता से कौन सी सत्ता व्यवस्था को बनाया रखा जाता है?

वह सामाजिक मान्यता जिसे मैं अपने जीवन में लागू होते हुए देखती / देखता हूँ:

इस मान्यता के पीछे की विचारधारा यह है कि:

इस मान्यता से जो सत्ता-व्यवस्था बनी रह पाती है, वह है:

भारत जैसे देशों में, कुछ जाति के पुरुषों और महिलाओं, दोनों के लिए कहीं आ-जा सकने के कठोर सामाजिक नियम बने हुए हैं – जैसे उन्हे मंदिर में प्रवेश की मनाही है, 'ऊंची' जाति के लोगों के प्रयोग के लिए 'नियत' कुएं या नल पर पानी भरने की मनाही है। जैसा कि पहले भी लिखा गया है, दलित बच्चों को पढ़ाई करते समय दूसरी जाति के बच्चों के साथ कक्षा के अंदर नहीं बैठने दिया जाता। ये सभी नियम जाति व्यवस्था के विचार की अभिव्यक्ति करते हैं और इन्हे जाति प्रथा की सत्ता व्यवस्था को सुरक्षित रखने के लिए ही बनाया गया है।

संस्थाएं

जेंडर पर आधारित और दूसरी सामाजिक और आर्थिक सत्ता व्यवस्थाओं को बनाये रखने में सहयोगी स्तम्भ ***वे संस्थाएं*** हैं जो सामाजिक मान्यताएँ व नियम और उनके मूल में विध्यमान विचारधाराओं को प्रतिपादित और समृद्ध करती हैं।

अगर आप इस पर विचार करें तो आप पाएंगे कि आपने अपने जीवन के पहले सामाजिक नियम अपने ***घर*** में, और शायद अपनी माँ से ही सीखे होंगे। परिवार एक ऐसी शक्तिशाली संस्था है जहां बच्चों को छोटी उम्र से ही जीवन जीने के नियम प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से सिखाये जाते हैं, इसलिए प्रचलित सामाजिक विचारों को सुदृढ़ करने में इसका महत्वपूर्ण योगदान होता है। परिवार में ही हमें जेंडर, जाति, वर्ग, वंश, समुदाय आदि के नियम सीखने को मिलते हैं। दूसरी महत्वपूर्ण संस्था है ***धर्म*** जो अपनी खुद की मान्यताओं के द्वारा सामाजिक नियमों को मजबूत बनाती है। उदाहरण के लिए, दुनिया के अधिकांश धर्म समाज में पुरुष की श्रेष्ठता और नारी के पुरुष के अधीन होने के विचार को ही आगे बढ़ाते हैं – कहा जाता है कि परमात्मा नें दुनिया पर हुकूमत करने और इसे चलाने के लिए पुरुष की रचना की और पुरुष की सेवा और 'सहायता' करने के लिए औरत को बनाया।

बाज़ार भी, पितृसत्ता को सुदृढ़ करता है। बाज़ार से हमारा अभिप्राय, किसी देश में आर्थिक गतिविधियों को चलाने वाली आर्थिक संस्थाओं का समूह होता है और इसमें बैंक, निजी व सरकारी कंपनियाँ, व्यापार तथा वित्तीए संघ और यहाँ तक कि स्थानिय कृषि उपज मंडियाँ भी, जहां फसल और वस्तुएँ खरीदी व बेची जाती हैं, शामिल होती हैं! बाज़ार, विचारधाराओं के नियमों को – विशेषकर पितृसत्ता की विचारधारा को - प्रत्यक्ष और परोक्ष, दोनों तरह से सुदृढ़ करता है। उदाहरण के लिए, आज से केवल बीस वर्ष पूर्व, एशिया, अफ्रीका और मध्य-पूर्व के कई भागों में औरतों को अपने पति, पिता या भाई की सहमति या मंजूरी के बिना बैंक से ऋण नहीं मिल सकता था। नेपाल में महिलाएं अपने नाम से अपना कोई व्यवसाय शुरू नहीं कर सकती थीं; यह व्यवसाय उनके पति, पिता या भाई के नाम में पंजीकृत होना होता था। महिलाओं को कुछ विशेष नौकरियों पर नहीं रखा जाता था - जैसे कि वे अपनी इच्छा से टैक्सी ड्राईवर या प्लंबर या मैकेनिक नहीं बन सकती थीं – क्योंकि इन कामों को 'पुरुषों' के लायक काम समझा जाता था। भले ही महिलाएं कितनी भी योग्य क्यों न हों, उन्हे कभी भी निजी कंपनियों में या सार्वजनिक वित्तीए कंपनियों में नेतृत्व करने की भूमिका में नहीं रखा जाता था।

शिक्षण संस्थाएं भी ऐसे दूसरे महत्वपूर्ण संस्थान हैं जहां हम विचारधारा के नियमों को ग्रहण करते हैं और वर्तमान सत्ता व्यवस्थाओं को सुरक्षित बनाये रखना सीख लेते हैं। बहुत से देशों में आज भी, स्कूल में लड़कियों को कुछ खास तरह के 'लड़कों' वाले खेल नहीं खेलने दिये जाते। अभी कुछ ही समय पहले तक लड़कियों को व्यावसायिक या तकनीकी पाठ्यक्रमों या विज्ञान विषयों (डाक्टरी, इंजीन्यरिंग, कम्प्युटर साइन्स, वैज्ञानिक अनुसंधान) में दाखिला मिलने में कठिनाई आती थी। दुनिया में अनेक ऐसे अध्यनन हुए हैं जिनसे पता चलता है कि गणित और भौतिक विज्ञान जैसे विषयों सहित, अनेक विषयों में लड़कों की तुलना में बेहतर होने के बाद भी 12 या 13 वर्ष की उम्र के बाद, लड़कियों का प्रदर्शन कम होने लगता है क्योंकि मन ही मन, उन्हें यह लगता है कि ये विषय तो 'लड़कों' के पढ़ने के लिए हैं या फिर यह कि उन्हें लड़कों से आगे रहकर लड़कों को कमजोर नहीं दिखाना चाहिए। यह रुझान अभी पिछले कुछ ही समय से बदलना शुरू हुए हैं, लेकिन इसमें भी कई अनापेक्षित विरोध सामने आए हैं।

मेडिकल कॉलेज में दाखिले की परीक्षा में तो बहुत सी लड़कियां पास हो गईं हैं: अब हम क्या करेंगे?

भारत में एक प्रख्यात प्राइवेट मेडिकल कॉलेज द्वारा हमेशा ही लड़कियों को दाखिले के लिए आवेदन करने के लिए प्रेरित किया जाता था। इस कॉलेज में दाखिले के लिए बहुत कठिन परीक्षा पास करनी होती थी – दाखिले की परीक्षा में बैठने वाले 1000 छात्रों में से केवल 300 ही परीक्षा पास कर पाते थे और कॉलेज इन 300 में से केवल 100 छत्रों को दाखिला देता था। वर्ष 2000 के आसपास, इस परीक्षा में बैठने और इसे पास करने वाली लड़कियों का औसत लगभग 40 प्रतिशत था। लेकिन जल्दी ही, जब विज्ञान विषय में बेहतर नंबर लाने वाली लड़कियों के लिए चिकित्सा की पढ़ाई करना प्रचलन में आया, तब और ज़्यादा लड़कियों नें इस परीक्षा में बैठना और इसे उत्तीर्ण करना शुरू कर दिया।

अचानक कॉलेज के सामने एक कठिन स्थिति तब खड़ी हो गयी, जब दाखिले के लिए परीक्षा पास करने वाले कुल छात्रों में 60 प्रतिशत से अधिक संख्या लड़कियों की थी – अब दाखिला देने वाली समिति ऊहापोह में पड़ गयी। कॉलेज में छात्रों की संख्या में इस असमान अनुपात को कैसे हल किया जाये? ऐसा कैसे संभव है कि पढ़ने वाले छात्रों में अधिक संख्या लड़कियों की हो? तो ऐसे में, परीक्षा परिणाम के आंकड़ों को अनदेखा करते हुए उन्होने कुल सीटों में से केवल 50 प्रतिशत सीटों पर लड़कियों की भर्ती की और शेष 50 प्रतिशत सीटें लड़कों के लिए रख दीं। कॉलेज के अधिकारियों नें इसे एक "उचित समाधान" बताया।

अब क्या यह रोचक नहीं लगता कि इस कॉलेज के 70 वर्षों के इतिहास में, वहाँ छात्रों की कुल संख्या में 100, 90, 80, 70 प्रतिशत संख्या लड़कों की होती थी और इसे कभी भी "असंतुलन" नहीं समझा गया? फिर यह चिंता केवल तब ही क्यों हुई जब लड़कियों की संख्या का प्रतिशत पुरुष छात्रों के प्रतिशत से अधिक होने को आया?

प्रशासन

और अंत में, शासन तंत्र – जिसमें सरकार, न्यायपालिका, कानून प्रवर्तन एजेंसियाँ और प्रशासनिक एजेंसियाँ शामिल हैं - भी एक प्रमुख संस्था है जिसके द्वारा प्रभावी सत्ता व्यवस्थाएँ परोक्ष रूप से सुरक्षित रखी जाती है, और यहीं पर इन शक्ति-व्यवस्थाओं को सुरक्षित रखने वाली विचारधाराओं की फिर एक बार उत्पत्ति होती है। लेकिन शासन तंत्र एक ऐसी संस्था भी हो सकती है जो इन शक्ति व्यवस्थाओं और विचारधारायों में परिवर्तन भी करने की कोशिश करती है। ऐसे अनेक उदाहरण मौजूद हैं जहां शासन तंत्र और इसकी विभिन्न एजेंसियाँ मिलकर सीधे या अप्रत्यक्ष रूप से शक्ति व्यवस्था, विशेषकर जेंडर संबंधी क़ानूनों का समर्थन करती हैं।

उदाहरण के लिए, जेंडर पर आधारित और दूसरे कई सामाजिक पक्षपात किसी देश के क़ानूनों में देखे जा सकते हैं – अधिकांश देशों में, उदाहरण के लिए, बलात्कार का शिकार हुई पीड़िता को, अपने साथ हुए अपराध को सिद्ध करना होता है। बलात्कार के मामले में गवाही देने और प्रक्रिया संबंधी नियम बिलकुल भी जेंडर संवेदी नहीं हैं, और इससे यही संदेश जाता है कि यदि आप इतने बेशर्म हैं कि बलात्कार जैसे घृणित अपराध की सूचना पुलिस को देते हैं, तो आपको अपने साथ किसी दयापूर्ण व्यवहार की उम्मीद नहीं रखनी चाहिए। इससे पितृसत्ता वाली इसी मान्यता की पुष्टि होती है कि किसी महिला के साथ यौन अपराध इसलिए होता है क्योंकि उसने कपड़े पहनने, घूमने, व्यवहार के लागू नियमों का पालन नहीं किया, या फिर उसके 'परिवार के पुरुष' उसके 'मान-सम्मान' को बचा पाने में असफल रहे। लेकिन इसके अलावा दूसरे क़ानूनों और नीतियों से भी यही पता चलता है कि हमारे अंदर जेंडर पूर्वाग्रह कितने गहरे हैं: जब भी सरकार 'भूमिहीनों के लिए भूमि' देने या 'जुटाई करने वालों के लिए भूमि' देने की कोई योजना चलाती है या फिर सामाजिक / आर्थिक कल्याण की कोई दूसरी योजना लाती है, तो प्राय: यह योजनाएँ 'परिवार के मुखिया' यानि पुरुष के लिए होती हैं और भूमि उसी के नाम पर दी जाती है। मातृ-प्रभुत्व वाले मातृवंशीय समुदायों में भी ऐसा ही हुआ है जहां भूस्वामिनी हमेशा महिलाएं ही होती थीं।

अनेक मामलों में, जब महिलाओं के अधिकारों को सुरक्षित रखने या जेंडर समानता को आगे बढ़ाने के लिए प्रगतिशील कानून भी बनाए गए हैं, तो *इन क़ानूनों को लागू करने वालों* के मन में पितृसत्ता से प्रभावित दृष्टिकोण रहते हैं या फिर वे अपने निजी मानकों और पूर्वाग्रहों को इस तरह आरोपित जोड़ देते हैं जो उस कानून को बनाए जाने की मूल धारणा के विपरीत होता है। तलाक लेने के लिए न्यायालय में जाने, या घरेलू हिंसा अथवा पत्नी प्रतारणा से मुक्ति पाने या यौन अपराध करने वाले किसी अपराधी को सज़ा दिलाने के लिए जो महिलाएं कानूनी कार्यवाही करती हैं, उन्हें अक्सर उन लोगों के वैचारिक विरोध का सामना करना पड़ता है जिनका कर्तव्य ही इनकी सहायता करना होता है। पुलिस अधिकारी और न्यायाधीश ही अक्सर वे पहले लोग होते हैं जो महिला पर इन क़ानूनों का सहारा लेकर अपने पति 'की इज्ज़त उछालने' या परिवार के मान-सम्मान को ठेस पहुंचाने के दोष मढ़ते हैं।

अनेक तरह से, ये सभी संस्थाएं अकेले नहीं बल्कि एक दूसरे के साथ और सहयोग से काम करते हुए पितृसत्तात्मक, सामंतवादी और नस्लीए विचारों और मान्यताओं को बढ़ावा देती हैं। उदाहरण के लिए, कई बार सरकारी और निजी कंपनियाँ मिलकर किसी स्थान पर रहने वाले मूल निवासियों को बाहर करने का काम करती हैं ताकि ज़्यादा मुनाफे वाले खनन उद्योग लगाए जा सकें या फिर बिजली बनाने के महंगे कारखाने स्थापित किए जा सकें। बहुत से देशों में सरकार और वहाँ के धर्मगुरु मिलकर महिलाओं, धार्मिक अल्पसंख्यकों या यौन-अल्पसंख्यकों के अधिकारों का हनन करने वाले कानून और नीतियाँ बनाते है। ऐसे में हमें यह समझना होगा की 'संस्थान' नामक यह स्तम्भ वास्तव में एक मिली जुली सत्ता है जो वर्तमान सत्ता व्यवस्थाओं का समर्थन करती है, हालांकि इन संस्थाओं में ऐसे लोग हमेशा मौजूद होते हैं जो व्यक्तिगत रूप से इन संस्थाओं की दिशा में परिवर्तन कर इन्हे सामाजिक न्याय और जेंडर न्याय के लक्ष्यों के अनुरूप लाने की कोशिश करते रहते हैं।

भय और हिंसा की भूमिका

यह ध्यान देने योग्य बात है कि महिला अधिकारों या जेंडर समानता पर काम करने वाले हम में से अधिकांश लोग यह मानते हैं कि भय और हिंसा – विशेषकर हिंसा – ही पुरुष विशेषाधिकार और प्रभुता को बनाए रखने और महिलाओं को दबा कर रखने के लिए प्रयोग में लाया जाने वाला मुख्य हथियार या साधन होता है।

हमनें विचारधारा को समझ लिया है, हमें पता है कि पितृसत्ता और दूसरी सामाजिक/आर्थिक सत्ता को सुरक्षित रखने में विचारधारा एक प्रभावी माध्यम है – वास्तविकता यह है कि विचारधारा, हिंसा से बेहतर माध्यम है, क्योंकि हिंसा न केवल झंझट है बल्कि इसे दिखा कर इसका दावा भी करना पड़ता है।

हमें पता है कि दमनकारी सत्ता का हमेशा विरोध होता है | कुछ लोग समाज में अपनी स्थिति को स्वीकार करने से इंकार करते हैं या उन सामाजिक नियमों और मान्यताओं का विरोध करेंगे जो उन्हे दबा कर रखने के लिए बनाई गयी हैं। इतिहास ऐसी घटनाओं से भरा पड़ा है जब महिलाओं नें पितृसत्ता का विरोध किया; उत्पीड़ित नस्लों, वर्गों, जातियों, जातिये समूहों नें खुद को उपेक्षित और अलग-थलग करने वाली व्यवस्थाओं का विरोध किया। आज बड़ी संख्या में *एलजीबीटी* लोगों, विकलांग लोगों के समूह या *सेक्स-वर्कर्स* समाज में व्याप्त भेदभाव, कलंक और अलगाव से लड़ाई कर रहे हैं। जब इस तरह का विरोध, प्रमुख सत्ता व्यवस्था और इस पर प्रभुत्व रखने वालों के लिए खतरा बन जाता है, और जब विचारधारा और सामाजिक नियमों से इस विरोध को दबाया नहीं जा सकता, तब इस चुनौती को पीछे धकेलने के लिए हिंसा का सहारा लिया जाता है। वास्तव में, महिलाओं के मामले में, हिंसा के बजाय केवल हिंसा का डर या धमकी ही महिलाओं को सामाजिक नियमों का उल्लंघन करने से रोकती है – बहुत ज़्यादा चुनौती खड़ी करने पर सामाजिक निष्कासन का डर, गलत तरीके के कपड़े पहनने, या अकेले किसी जगह या रात के समय चले जाने पर, हिंसा का डर।

इसलिए हिंसा किसी भी सत्ता व्यवस्था के सामने विरोध को समाप्त करने का आखिरी हथियार होता है, हिंसा कभी भी नियंत्रण रखने का मुख्य तरीका नहीं होती। नियंत्रण रखने और अपने हितों की रक्षा के लिए संसाधनों, विचारों पर अंकुश, सामाजिक नियम और संस्थाओं का प्रयोग, कहीं अधिक प्रभावी तरीका है। यही कारण है कि हमें अपनी कार्ययोजनाओं में इन कहीं अधिक महत्वपूर्ण तरीकों पर ध्यान देना चाहिए और केवल हिंसा पर ही अपना ध्यान केन्द्रित नहीं रखना चाहिए।

शक्ति व्यवस्थाएँ किस तरह शुरू होती हैं और बनी रहती हैं

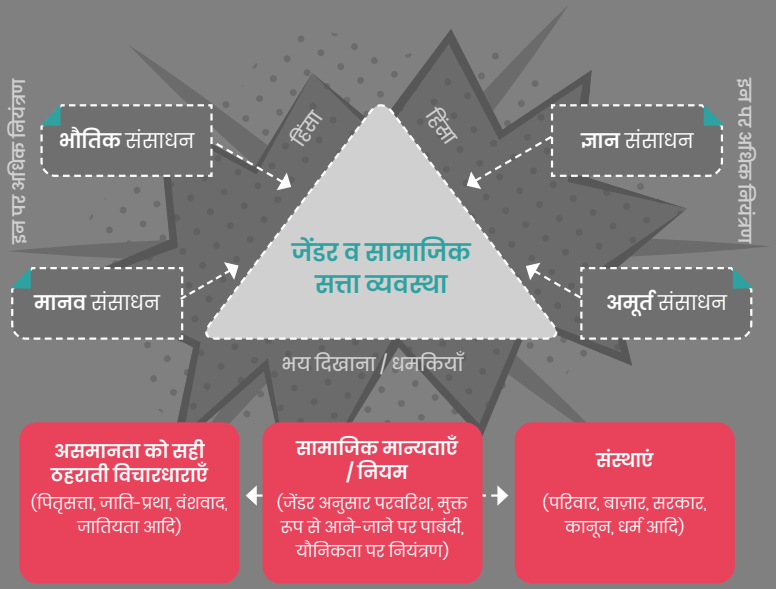

हम सभी जानते हैं कि दुनिया में हर जगह हिंसा – न केवल महिलाओं के प्रति बल्कि भेदभाव का सामना करने वाली दूसरी यौनिक पहचानों और यौन रुझान वाले लोगों (*ट्रान्सजेंडर, गे* और *लेस्बियन* लोग) के साथ - लगातार बढ़ रही है। हमें सड़कों पर छेड़छाड़, बलात्कार, घरेलू हिंसा, तेज़ाब फेंके जाने, *ऑनलाइन* हिंसा और उत्पीड़न, न जाने क्या-क्या देखने को मिलता है। लेकिन हमें यह समझना है कि लगातार बढ़ती हुई यह हिंसा वास्तव में पिछले 50 से 100 वर्षों के दौरान महिलाओं और दूसरे जेंडर अल्पसंख्यकों की बड़ी उपलब्धियों के विरुद्ध हो रही प्रतिक्रिया है। हमनें कानून, शिक्षा, रोजगार, राजनीतिक सहभागिता के क्षेत्र में समान अधिकार पा लिए हैं; हमनें अनेक ऐसी प्रथाओं और परम्पराओं (*फीमेल जेनिटल म्यूटीलेश्न*, बाल-विवाह, जबरन विवाह, विधवा उत्पीड़न, बलात्कार और घरेलू हिंसा) के विरुद्ध संघर्ष किया है जो हमारा शारीरिक उल्लंघन करती थीं और हमारी स्वतन्त्रता में बाधक थीं। आज महिलाएं उत्पादक कार्य बल का बड़ा हिस्सा हैं, वे आर्थिक रूप से स्वतंत्र बनती जा रही हैं, हर तरह के भेदभाव और हिंसा का विरोध कर रही हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि हमने मर्दानगी की धारणा, या असली 'पुरुष कैसा होता है' का विरोध किया है और इस मर्दानगी की संस्कृति को चुनौती दी है। हमारी ये उपलब्धियां पितृसत्ता के लिए बड़ा खतरा बन गयी हैं। महिलाओं और दूसरे जेंडर अल्पसंख्यकों के विरुद्ध बढ़ती हिंसा के कई कारण हो सकते हैं, लेकिन उसका एक बड़ा कारण ये उपलब्धियां भी हैं।

सत्ता व्यवस्थाओं की शुरुआत इसीलिए होती है क्योंकि कुछ लोग भौतिक, मानवीय और अन्य संसाधनों पर अधिक नियंत्रण पा लेते हैं। शायद आरंभ में अपने नियंत्रण को बनाए रखने के लिए वे हिंसा का सहारा लें, लेकिन जल्दी ही वे विचारधाराओं के रूप में अधिक कुशल प्रक्रिया विकसित कर लेते हैं जो संसाधनों का असमान वितरण और इसके कारण उपजने वाली असमानता को सही ठहराती है। आगे चलकर इन विचारधाराओं को सामाजिक नियमों का रूप दे दिया जाता है और ये नियम हर किसी को बचपन से ही परिवार, स्कूल या धर्म जैसी संस्थाओं में सिखाये जाते हैं ताकि उत्पीड़न और भेदभाव के शिकार लोग भी इस सत्ता व्यवस्था को

स्वीकार कर लें। इन सामाजिक मान्यताओं को फिर बाज़ार, सरकार और इसके सहयोगी (कानून व्यवस्था, पुलिस, प्रशासन) भी प्रबल बनाते हैं। भय के कारण भी अनेक लोग इस सत्ता व्यवस्था का विरोध नहीं कर पाते। लेकिन फिर भी, कुछ व्यक्ति या समूह जब सामाजिक नियमों को तोड़कर, प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से इन सत्ता व्यवस्थाओं को चुनौती देते हैं, तो एक बार फिर इस विरोध को पीछे धकेलने के लिए हिंसा का सहारा लिया जाता है।

तो सत्ता व्यवस्थाओं में परिवर्तन करने के लिए हमें ऐसी कार्ययोजनाएँ बनानी होंगी जो उन प्रक्रियाओं को समझ सकें जो वर्तमान सत्ता व्यवस्था को कायम रखने में सहयोगी बनी हुई हैं। न केवल दिखाई दे रही सत्ता, बल्कि छुपी हुई और अदृश्य सत्ता व्यवस्था का भी मुक़ाबला करना होगा। लोगों को अधिकार दिलाने और संसाधनों पर नियंत्रण पाने के लिए काम करने के साथ उन्हें विचारधारा की भूमिका, विचारधारा क्या है और सामाजिक मान्यताओं के रूप में उन्होने विचारधारा को कैसे अपनाया है, यह समझने में भी मदद की जाये । समाज के उन सभी प्रमुख संस्थाओं को चुनौती देना होगा जो इन मान्यताओं को मजबूत बनाती है और सत्तावान समूहों की सत्ता को यथास्थान रखती हैं।

यह एक बहुत बड़ा, लगभग असंभव सा काम लगता है – लेकिन यह काम न केवल किया जा सकता है बल्कि, पूरी दुनिया में अनेकों बार किया भी जा चुका है। ऐसे बहुत से शक्तिशाली और मजबूत आंदोलन, विशेषकर महिला आंदोलन, हुए हैं जिन्होने सत्ता व्यवस्थाओं, खासकर पितृसत्तात्मक सत्ता की जड़ें हिलाकर रख दी हैं और महिलाओं के हक़ में बड़ी उपलब्धियां प्राप्त की हैं। अगर ऐसा नहीं हुआ होता, तो आज आप यह पुस्तिका न पढ़ रहे होते और न ही आप यह विचार करते कि उपेक्षित और अपने लिए आवाज़ न उठा पाने वालों को कैसे सशक्त किया जाये। अगर आप अपने आसपास नज़र दौड़ाएँ, अपने खुद के समुदाय, राज्य या देश में, तो आपको आंदोलनों के अनेक ऐसे उदाहरण मिल जाएँगे जिनसे बड़े परिवर्तन संभव हुए है।

महिलाओं नें हमेशा ही सत्ता को चुनौती दी है। ऐसी कहानियों को खोजें और उन्हें अपने दिल से लगाकर रखें – उन्हीं में आपकी सफलता और शक्ति निहित है!

श्रीलता बाटलीवाला

श्रीलता बाटलीवाला क्रिया संस्था *(क्रिएटिंग रिसौर्सेस फॉर एम्पोवेरमेंट इन एक्शन)* में निदेशक, जानकारी संवर्धन व नारीवादी नेतृत्व पद पर कार्यरत हैं। **क्रिया**, नई दिल्ली, भारत में स्थित नारीवादी मानवाधिकार संस्था है। श्रीलता अपने वर्तमान कार्य के अंतर्गत दक्षिणी देशों में युवा महिला एक्टिविस्ट्स के क्षमता निर्माण और उन्हें मार्गदर्शन देने के दायित्व का निर्वहन करती हैं। इसके अतिरिक्त वे सबसे अधिक उपेक्षित और हाशिये पर रह रहे लोगों के बीच कार्यरत एक्टिविस्ट्स के अनुभवों और उनके कार्य को आधार बना कर नयी जानकारियाँ भी विकसित कर रही हैं।

क्रिया में नियुक्ति से पहले, श्रीलता एविड *(असोशिएशन फॉर विमेन्स राइट्स इन डेव्लपमेंट)* संस्थान में सहयोगी स्कालर, हावर्ड विश्वविद्यालय के *हौसर सेंटर फॉर नॉन प्रॉफ़िट ऑर्गनाइज़ेशनस* में सिविल सोसाइटी रिसर्च फैलो और फोर्ड फ़ाउंडेशन में सिविल सोसाइटी प्रोग्राम ऑफिसर के रूम में कार्य कर चुकी हैं।

श्रीलता का भारत में जमीनी स्तर पर कार्य करने का लंबा अनुभव रहा है जहां उन्होने बड़े पैमाने पर काम करने वाले अनेक महिला आंदोलन आरंभ किए जिनमें मुंबई और दक्षिण भारत के कर्नाटक राज्य के पिछड़े जिलों में अत्यधिक निर्धन समुदायों की हजारों ग्रामीण और शहरी महिलाओं को संगठित कर सशक्त बनाया गया।

श्रीलता नें महिलाओं से जुड़े अनेक मुद्दों पर लिखा है और वे महिला स्शक्तिकरण पर अपने लेखन के लिए सबसे अधिक जानी जाती हैं। उनके द्वारा रचित नवीनतम प्रकाशन, *एंगेजिंग विथ एम्पोवेरमेंट – एन इंटेलेक्चुवल अँड एक्सपेरिमेंटल जरनी* (विमेन अनलिमिटेड, 2014) उनके लेखों का संग्रह है। श्रीलता अनेक अंतर्राष्ट्रीय और भारतीय मानवाधिकार, महिला अधिकार और विकास संगठनों के निदेशक बोर्ड की भी सदस्या रह चुकी हैं। वर्तमान में श्रीलता दक्षिण भारत में बंगलौर और नीलगिरी पहाड़ियों के कुन्नूर शहरों में रहती और कार्य करती हैं। वे अपने चार नाती-पोतों की सक्रिय नारीवादी दादी होने पर गर्व महसूस करती हैं! नारीवादी आंदोलन की 'दादी माँ' के रूप में नए, युवा नेतृत्व और नए आंदोलनों को मार्गदर्शन देने, उनकी सहायता करने और उनसे कुछ नया सीखने में वे वरिष्ठ नारीवादी बनने के नए तरीके अपनाने में भी सक्रिय हैं। अपने खाली समय में वे बेकिंग और सिलाई करना पसंद करती हैं और नेट्फ्लिक्स देखती हैं।

क्रिया CREA

वर्ष 2000 में स्थापित, क्रिया एक **नारीवादी मानवाधिकार संस्था** है जो भारत में नई दिल्ली में स्थित है। यह दक्षिणपंथी नारीवादी नेतृत्व में दक्षिणी देशों में कार्यरत कुछ चुनिन्दा अंतर्राष्ट्रीय महिला संस्थाओं में से है जो जमीनी स्तर, राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय, सभी स्तरों पर काम करती है।

क्रिया एक ऐसी **न्यायप्रिय और शांतिप्रिय दुनिया** की स्थापना की संकल्पना करती है जहां प्रत्येक निवासी गौरव, आदर, और समानता के साथ जीवन निर्वाह करे। क्रिया नारीवादी नेतृत्व विकसित करने, महिला मानवाधिकारों को आगे बढ़ाने और सभी लोगों के लिए यौन एवं प्रजनन स्वतन्त्रता को आगे बढ़ाने के लिए कृत-संकल्प है।

प्रकाशन दल

निर्णायक सम्पादन : बिशाखा दत्ता
डिज़ाइन : रूपिन्दर कौर – दालचीनी
मुद्रण : जी. आर. प्रिंटिंग प्रेस

अभिस्वीकृति

क्रिया इस पुस्तिका के प्रकाशन में *ग्लोबल फ़ंड फॉर विमेन* के उदार सहयोग के प्रति आभार व्यक्त करती है।

अनुवादकर्ता : सोमेन्द्र कुमार, somindergsk@hotmail.com
समीक्षा : शालिनी सिंह, ssingh@creaworld.org
लावण्या मेहरा, lmehra@creaworld.org